चन्दामामा
सितम्बर १९६७
75 P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS 26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

चांद उगा है, फूल खिला है
कदम गाछ तर कौन ?
नाच रहे हैं हाथी-घोड़े
व्याह करेगा कौन ?

ताँती के घर ब्रंग बसा है
ढोंसा को है तोन्द !
खाता-पीता मौज उड़ाता
गाना गाता कौन ?

हँसी के इस फुहारे को छोड़ते ही करोड़ों-करोड़ शिशुओं के खिलखिलाते प्रफुल्लित चेहरे नजर के सामने उभर आते हैं।

प्रगतिशील भारत में शिशुओं के स्वास्थ्य को आकर्षक बनाये रखने के लिये 'डाबर' ने तरह-तरह के प्रयोग एवं परीक्षण के बाद–'डाबर जन्म-घूँटी' का निर्माण किया है।

शिशुओं के सभी प्रकार के रोगों में व्यवहार की जाती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) प्रा. लि., कलकत्ता-२६

चन्दामामा

सितम्बर १९६७

धड़ाम
दिलीप और उसके साथियों ने दुर्घटना के समय मदद की

ऐसा क्यों?

जबकि गेवाबॉक्स से आप इन सबको शामिल कर, इतने ही पास से, इससे बड़ी तस्वीर उतार सकते हैं

अपने समकक्ष कैमरों से उतारी गई तस्वीरों से **गेवाबॉक्स** द्वारा उतारी गई तस्वीरें ५०% बड़ी होती हैं—६ सी एम x ९ सी एम जितनी बड़ी, एल्बम साइज़ की, चौरस। अधिक लोगों को फ्रेम में शामिल करने के लिए आपको बहुत पीछे नहीं हटना पड़ता। **गेवाबॉक्स** के नॅगेटिव से एन्लर्जामेंन्ट भी बढ़िया बनते हैं।

गेवाबॉक्स की अन्य विशेषताएं भी अतुलनीय हैं—

* चमकदार, साफ़ 'आइ-लॅवल व्यूफ़ाइन्डर * ३ स्पीड (बल्ब, १/५० वीं सेकेन्ड और १/१०० वीं सेकेन्ड स्पीड) * २ एपर्चर (एफ ११ और एफ १६) * बढ़िया इस्पात से बनी हुई आकर्षक बॉडी।

गेवाबॉक्स को चलाना बहुत ही आसान है। आप सिर्फ़ 'क्लिक' कीजिए, बाक़ी का काम **गेवाबॉक्स** खुद कर लेगा। मूल्य: रु ४४.०० स्थानिक कर अलाहिदा

फ़ोटोग्राफ़ी सीखिए; गेवाबॉक्स अपनाइए। फ़ोटोग्राफ़ी एक ऐसा शौक है जिससे आप किसी भी समय की स्मृतियों के चित्र-संकलन से एक अनोखा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

गेवाबॉक्स

गेवाबॉक्स एक लोकप्रिय कैमरा है जो बढ़िया से बढ़िया तस्वीरें उतारता है।

रु. १०० जीतिए! इनाम जीतने का विवरण 'एग्फ़ा-गेवर्ट फ़ोटोगॅलरी' नामक पत्रिका में मिलेगा। इस पत्रिका के ६ अंक मुफ़्त प्राप्त करने के लिए रु. १ डाकखर्च के लिए इस पते पर भेजिए

AGI एग्फ़ा-गेवर्ट इंडिया लिमिटेड
कस्तूरी बिल्डिंग,
जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई १

Bensons-507 C Hin

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
सैनिक के लिए सूझबूझ की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी कि कर्तव्य पालन की। कर्तव्य पालन किया जाय, तो बहानेबाजी की और वाक्चातुर्य की आवश्यकता ही नहीं उठती। सूझबूझ अच्छी है, पर उसको बहानेबाजी और धोखाधड़ी में उपयोग करना अच्छा नहीं है। हमारा संकेत "लकड़ी की तलवार" की ओर है।
वर्ष: १८ सितम्बर १९६७ अंक: १३
CHITRA

भारत का इतिहास

नवाब से यूँ अपमानित होने के बाद, अंग्रेज अपनी स्थिति सुधारने के लिए प्रयत्न करने लगे। वे बंगाल की राजनैतिक परिस्थिति से खूब परिचित थे। वे कलकत्ता से फुल्टा पहुँचे, नवाब के शत्रुओं से बातचीत करनी शुरु कर दी। सिरोजुद्दौला ने जिनको कलकत्ता का अधिकारी नियुक्त किया था, वे अंग्रेजों के हाथ "बिक" से गये। उनके नाम थे उमीचन्द, जगत सेठ आदि थे। ये करोड़पति थे और इन करोड़पतियों की सिरोजुद्दौला के दरबार में बड़ी धाक थी। इस प्रकार सिरोजुद्दौला की जड़ खोदते, वे अपने व्यापार के बारे में नवाब के पास अर्जियाँ भेजते जाते थे।

यह जानते ही कि कलकत्ता नवाब के हाथ आ गया था, मद्रास के अंग्रेजों ने कलकत्ता फौज भेजने का निश्चय किया। फ्रेन्च से युद्ध करने के लिए सेना, नौकाबल पहिले से तैनात थी ही। क्लाइव और एडमिरल वाटसन के नेतृत्व में इन दोनों सेनाओं को भेजने का निर्णय किया गया। १४ दिसम्बर को ये सेनायें बेन्गाल पहुँचीं।

नवाब को युद्ध की तैयारियों के बारे में कुछ न मालूम था। फुल्टा से वे अपनी अर्जियाँ तब भी भेज रहे थे और उनके "बिके हुए" पक्षपाती नवाब के दरबार में उनकी तरफ से पैरवी किया करते— "ये तो विचारे व्यापारी हैं।" १७ दिसम्बर को वाटसन ने नवाब को लिखा कि अंग्रेजों के छीने हुए अधिकार उनको वापिस कर दिये जायें और जो कुछ नुक्सान उनका हुआ था, उसके लिए हरजाना दिया जाये। क्लाईव ने कलकत्ता पर आक्रमण किया। कलकत्ता के अधिकारी

मानिक चन्द ने ऊपर ऊपर से दिखाया कि वह युद्ध की तैयारी कर रहा था, पर वह मुर्शीदाबाद भाग गया। २ जनवरी १७५७ को कलकत्ता क्लाईव के आधीन आ गया। अंग्रेजों ने कलकत्ता के कई मकानों को नष्ट कर दिया और हुगली को लूटा।

इतना सब कुछ हो जाने के बाद सिरोजुद्दौला कलकत्ता आया। ९ फरवरी को "अली नगर सन्धि" के द्वारा अंग्रेज़ों ने जो कुछ माँगा था, वह दे दिया। शायद अपने कर्मचारियों के दुर्व्यवहार के कारण, नवाब ने, अंग्रेज़ों के साथ समझौता कर लेना ही अधिक उचित समझा।

उसी समय युरुप में "सात साल का युद्ध" प्रारम्भ हुआ और इस कारण फ्रेन्च और अंग्रेजों में भारत में भी तनातनी बढ़ी। अंग्रेजों ने चन्द्र नगर, जो फ्रेन्च के पास था, हथियाने की कोशिश की। परन्तु सिरोजुद्दौला ने इस पर आपत्ति की और कहा कि यह "अली नगर सन्धि" के विरुद्ध था। उसने यह घोषणा तो कर दी कि वह अपने राज्य के फ्रेन्चों की रक्षा करेगा, पर उसके लिए आवश्यक कार्यवाही उसने नहीं की। मार्च १७५७ में क्लाईव और वाटसन ने चन्द्रनगर को आसानी से जीत लिया। हुगली का फौजदार, नन्दकुमार, कलकत्ता से अपनी सेना दूर न ले जाता, तो अंग्रेज चन्द्रनगर जीत न पाते, हो सकता है कि नन्दकुमार ने अंग्रेजों से घूँस ले ली हो। परन्तु नवाब ने, नन्दकुमार को अंग्रेजों का विरोध करने के लिए भी नहीं भेजा था।

जो फ्रेन्च भाग आये थे, उनको नवाब ने अपने दरबार में शरण दी। अंग्रेजों के बहुत कहने सुनने पर भी उसने फ्रेन्चों को छोड़ा नहीं। अंग्रेज जान गये कि

जब वे युद्ध कर रहे थे, उस हालत में फ्रेन्चों का नवाब की मदद पाना उनके लिए फायदे की बात न थी। इसलिए उन्होंने सिरोजुद्दौला को गद्दी पर से उतारकर, उसके स्थान पर किसी और को बिठाने की ठानी। इसके लिए उन्होंने साजिश की। इस साजिश में, नवाब के सेनापति मीर जाफर, राय दुर्लभ और जगत सेठ शामिल हुए। मीर जफर और उसके साथियों के साथ १० जून को, अंग्रेजों का एक समझौता हुआ। इस समझौते के मुताबिक अंग्रेजों ने फौजी मदद देने का वादा किया और साजिशदारों ने उसके बदले उनकी मदद करने का वचन दिया। उमीचन्द ने लूटे हुए धन में से बहुत-सा हिस्सा माँगा। क्लाइव ने समझौते को लिखवाया और उसमें उमीचन्द की इच्छा को भी शामिल किया। जब वाटसन ने उस पर दस्तखत करने से इनकार कर दिया, तो क्लाईव ने स्वयं उसका हस्ताक्षर उस पर करके, उमीचन्द को दे दिया।

चूँकि फ्रेन्चों को शरण देने के कारण उसकी अंग्रेजों से दुश्मनी अधिक हो गई थी, इसलिए नवाब ने अपने कर्मचारियों की सलाह पर फ्रेन्च शरणार्थियों को अपने यहाँ से भेजने का निश्चय किया। उन्होंने जाते जाते नवाब को बताया कि उसके खिलाफ साजिश की जा रही थी। अगर तभी नवाब, मीर जाफर को कैद कर लेता, तो औरों की अक्ल ठिकाने आ जाती। उसने मीर जफर के आश्वासनों पर विश्वास किया और उसे ही सेनापति रखकर, युद्ध की तैयारियाँ करने लगा।

गौरी-चन्द्र

एक गाँव में एक खाते पीते किसान के परिवार में एक लड़का पैदा हुआ। उन्होंने उसका नाम चन्द्र रखा। पर ज्यों ज्यों वह बड़ा होता गया, त्यों त्यों उसकी बकवास भी अधिक होती गई।

एक बार उसके पिता ने उसे धमकाते हुए कहा—"क्यों नहीं औरों की तरह बातें करते हो? अगर तुम ऐसे ही रहे तो तुम्हें कौन अपनी लड़की देगा?"

"देखो जी, अगर आग चूल्हे में हो तो भी ऊपर जाती है और पानी ऊंचाई पर भी हो, तो नीचे की ओर जाता है।" चन्द्र ने अपने पिता से कहा।

"अरे पगले। मेरे चले जाने के बाद, तेरी क्या हालत होगी?" पिता ने पूछा।

"मैं भी चला जाऊँगा....तुम पहिले पैदा हुए हो, इसलिए पहिले चले जाओगे।" चन्द्र ने कहा।

पिता को उसपर इतना गुस्सा आया कि उसने उसको घर से जाने के लिए कह दिया। पिता का यह कहना था कि चन्द्र कपड़े और चप्पल पहिन और छाता उठाकर चल दिया। वह चलता चलता दुपहर को एक तालाब के किनारे पहुँचा। वहाँ नागेश नाम का एक व्यक्ति आया और उसने अपनी खाने की पोटली खेलते हुए चन्द्र की ओर देखकर पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ जा रहे हो?"

"मैं एक अनाथ हूँ। जहाँ मेरे पैर मुझे ले जायेंगे, वहाँ मैं जा रहा हूँ।" चन्द्र ने कहा।

"तो हमारे घर चले आओ और हमारे यहाँ काम करो।" कहते हुए नागेश ने अपना कुछ खाना उसे दिया और स्वयं भी कुछ खाया। फिर दोनों साथ चल पड़े। एक जंगल आया। चन्द्र को छाता खोलकर उठाकर चलता देख, नागेश ने पूछा—"छाया है न, क्यों छाता खोल दिया?"

"छाता खोलने के लिए मेरी खोपड़ी ने कहा है।" चन्द्र ने कहा।

कुछ दूर जाने के बाद एक नाला आया। नागेश ने अपनी चप्पल उतारकर हाथ में ले ली और चन्द्र चप्पल पहिने पहिने ही नाले में उतरा। जब नागेश ने पूछा कि वह इस प्रकार क्यों कर रहा था, तो उसने कहा कि उसके पैरों ने यह करने के लिए कहा था। थोड़ी दूर जाने के बाद, चन्द्र ने कहा—"इस रास्ते में सीढ़ी हो, तो क्या अच्छा हो!"

"रास्ते पर सीढ़ी का क्या मतलब है? पगले।" नागेश ने पूछा।

इस तरह बातें करते करते वे नागेश के गाँव पहुँचे। नागेश ने अपने घर का किवाड़ खटखटाकर बुलाया—"गौरी।"

तब एक लड़की ने आकर किवाड़ खोले। नागेश को उसने एक लोटे में पानी लाकर दिया। एक और आदमी को देखकर, वह एक और लोटे में पानी लाई और चन्द्र को वह देकर चली गई।

"यह नया लोटा है, या पुराना?" चन्द्र ने पूछा।

"क्या है यह पागलों का प्रश्न?" नागेश ने गुस्से में पूछा।

चन्द्र को बाहर बिठाकर, उसने अपनी पत्नी से कहा कि काम नहीं बना था। गौरी रसोई में रसोई कर रही थी।

नागेश गौरी के विवाह के लिए सम्बन्ध ढूँढ़ने गया था। कोई और सम्बन्ध देखना था। उसने अपनी पत्नी से चन्द्र के बारे में कहते हुए बताया—"विचारा कोई अनाथ है। बेटी के विवाह तक यहीं पड़ा पड़ा इधर उधर के काम करता रहेगा। कोई पगला मालूम होता है।"

इतने में खाना बन गया। गौरी ने अपने पिता को और अतिथि को भोजन के लिए बुलाया। उसने मामूली भोजन के साथ एक दो पकवान भी बनाये थे। भोजन के बाद नागेश भी चन्द्र के साथ बाहर जा बैठा। उसने पूछा—"कैसा रहा भोजन?"

"मेरे सिर जैसा है।" चन्द्र ने कहा।

यह बात गौरी के कानों में पड़ी। वह पिछवाड़े से पास के घर में चली गई। नागेश, चन्द्र की बात सुनकर उबल उठा—"अब तुम जाओ यहाँ से! इस घर में तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं है।"

"अगर ऋण बाकी है, तो आप ही चुकायेंगे।" चन्द्र उठा। चप्पल पहिनकर छाता उठाकर चल दिया।

जल्दी ही गौरी पान लाई। "वे कहाँ हैं?" उसने पिता से पूछा।

"चोर कहीं का। मैंने उसे भेज दिया है।" नागेश ने कहा।

"इतनी-सी ही बात पर गलती ही क्या है, बिना पान के भोजन यूँ ही तो होता है? इसलिए मैं पड़ोस के घर से पान ले आई।" गौरी ने कहा।

"जाते जाते वह घमंड में क्या कहता गया, जानती हो? अगर ऋण बाकी है, तो हम चुकायेंगे।" पिता ने कहा।

"कभी का ऋण था, तभी तो रास्ते जाते को बुलाकर हमने खाना दिया।" गौरी ने कहा।

"तुम नहीं जानती। वह रास्ते भर क्या क्या बकवास करता रहा।" नागेश ने जो कुछ हुआ था, गौरी को बताया।

सब सुनकर गौरी ने कहा—"वे बातें तुम समझे नहीं, पर वे पागलों की बातें नहीं हैं?" उसने सबका अर्थ बताया।

नया लोटा और पुराना लोटा कहकर वह जानना चाहता था कि गौरी का विवाह हुआ है कि नहीं। रास्ते में सीढ़ी का मतलब था कि क्या अच्छा हो कि कहानियाँ सुनाते सुनाते रास्ता कट जाये। वह चप्पल पहिनकर नाले में इसलिए चला था ताकि तह के काँटे या पत्थर उसे न चुभें। जंगल में उसने छाता इसलिए खोला था ताकि ऊपर से बीट वगैरह उस पर न पड़े।

गौरी ने चन्द्र को फिर बुलाने की ठानी। उसने अपनी महरी को बुलाकर कहा—"तुम चौक में जाओ, वहाँ दुकानदार से एक आने के चटचट और एक आने के चिटचिट ले आ। तुम क्या माँग रही हो जो यह दुकानदार को बताये, उससे तू उसका नाम पूछना। अगर वह अपना नाम चन्द्र बताये, तो उसे साथ ले आना।

महरी ने दुकानदार के पास जाकर पूछा—"एक आने के चटचट और एक आने के चिटचिट दो।"

"ये क्या हैं? ठीक तरह बताओ।" दुकानदार ने पूछा।

"एक आने की राई और एक आने की मूँगफली माँग रही है।" चन्द्र ने कहा। वह तब वहीं था। महरी उसका नाम मालूम करके, उसे साथ ले गई। नागेश जान गया कि गौरी उसे चाहती थी, उसने उसके साथ विवाह कर दिया।
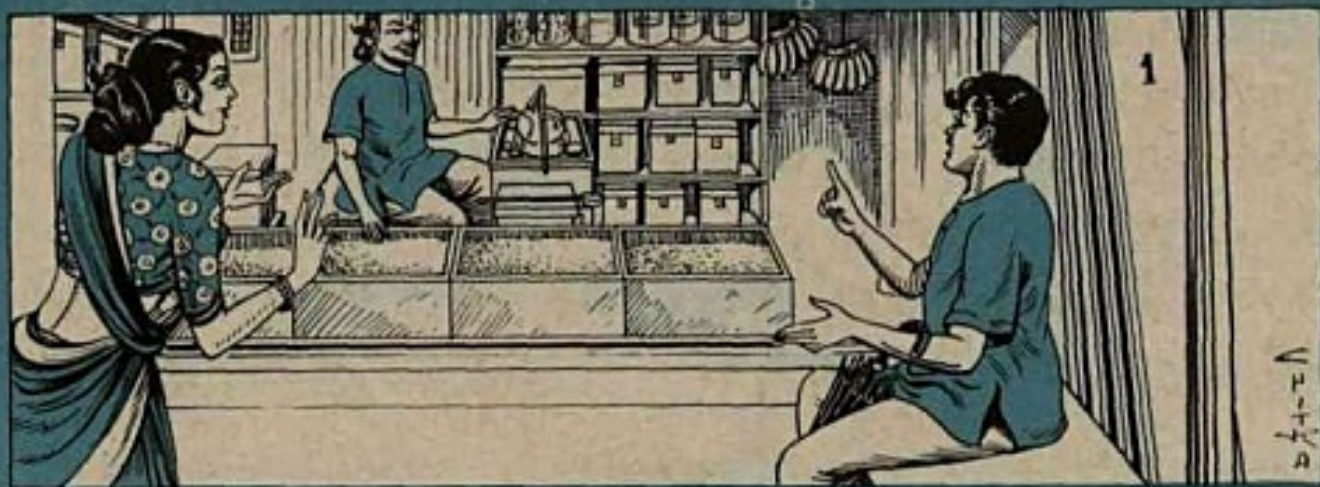
पाताल दुर्ग

[१६]

[धूमक आदि, राक्षसों की आँखों में धूल झोंककर पहाड़ों की ओर दौड़े। वहाँ उन्हें एक जलप्रपात दिखाई दिया। सोमक अपनी प्यास बुझाने के लिए उसके पास जो पहुँचा, तो पानी आना बन्द हो गया और वहाँ उन्हें एक द्वार दिखाई दिया। अब वे उसके पास गये, तो वह खुल पड़ा। अन्दर लपटें उठ रही थीं। उसके बाद—]

गुफा में लपटें देखते ही, धूमक द्वार पर ही रुक गया। सोमक और विरूप ने अपने अपने हथियार हाथ में ले लिये। विरूप के कन्धे पर बैठे काले गरुड़ ने जोर से पंख फड़फड़ाकर उड़ने का प्रयत्न किया।

"कालशम्बर मान्त्रिक कहाँ है? ऐसा लगता है, जैसे जलप्रपात जादू का हो। ये लपटें क्या हैं? कहीं इसमें कोई धोखा तो नहीं है?" कहते हुए विरूप ने एक कदम आगे रखा। धूमक के कन्धे के ऊपर से अन्दर झाँककर देखा।

"कौन है यह? जंगल का नायक विरूप है क्या?" इन प्रश्नों के साथ लपटों के पीछे कालशम्बर मान्त्रिक का रूप दिखाई दिया। विरूप ने दोनों हाथ

उठाकर मान्त्रिक को नमस्कार किया और वहीं द्वार पर उसने साष्टाङ्ग किया।

मान्त्रिक मुस्कराता द्वार के पास आया। उसने इस प्रकार हाथ उठाया, जैसे विरूप को आशीर्वाद दे रहा हो, "ये दोनों कौन हैं?" उसने आश्चर्य में प्रश्न किया।

विरूप उठकर अभी जवाब नहीं दे पाया था कि उसने स्वयं पूछा—"तुम कदम्ब देश के हो न? तुम्हारे राजा उग्रसेन का क्या हालचाल है? तुम्हारे राज्य की सीमा पर, मुझ पर निशाना लगाकर बाण छोड़नेवाला कौन था, तुम दोनों में?"

कालशम्बर से स्नेह करने का यही मौका अच्छा था, धूमक ने सोचा। उसने आगे बढ़कर मान्त्रिक को नमस्कार करके कहा—"महामान्त्रिक, उस पहाड़ी ईलाके में, अन्धेरे में, कोई गलती हो गई। मैं उसके लिए अपनी तरफ से और अपने साथी सोमक की ओर से माफी चाहता हूँ। यह है आपका मन्त्रदण्ड इसकी सहायता से ही हम इतनी दूर आ पाये हैं।

कालशम्बर ने मन्त्रदण्ड लिया और उसे आँखों पर लगाकर कहा—"जो कुछ हुआ है, उसे भूल जाओ। अब बहुत कुछ करने को है। तुम गुफा में आ जाओ।"

धूमक आदि गुफा में गये। तुरत गुफा के द्वार पर पत्थर का तख्त गिर गया। फिर पहिले की तरह जलपात होने लगा और जोर से ध्वनि होने लगी। द्वार का मुख भी बन्द हो गया।

मान्त्रिक लपटोंवाली उस गुफा से एक और गुफा में गया। वहाँ ऊपर से खूब प्रकाश आ रहा था। वहाँ से भूमि में एक मार्ग था। उसी पर मान्त्रिक,

धूमक आदि को धीमे धीमे नीचे ले गया।

वह भूमि समतल थी। पहाड़ में कुछ ऐसी गुफायें बनी हुई थीं, कि आदमी वहाँ आराम से रह सकते थे। उनके सामने के आँगन में कुछ लोग काम कर रहे थे।

कई बड़े बड़े मूसलों से ओखलों में पेड़ों के पत्ते और जड़े कूट रहे थे और कई उस कूटी हुई चीज़ को चटाइयों पर फैला रहे थे।

कालशम्बर पीछे की ओर मुड़ा। अपने पीछे आनेवालों की ओर मुस्कराते हुए उसने कहा—"शायद तुम्हें अचरज हो कि यह सब क्या है?"

धूमक ने सिर हिलाकर "हाँ" सूचित किया।

"यहाँ जो काम कर रहे हैं, सबको कुन्तल देश के मन्त्री गंगाधर ने भेजा है। इनका सरदार भद्र कुछ और आदमियों के साथ पहाड़ पर गया हुआ है। हम यहाँ पहाड़ के पेट में हैं। अगर महाकलि राक्षस का किला पाताल-दुर्ग है, तो हमारा यह पर्वत गर्भदुर्ग है। उस दुष्ट को, उसके दुर्ग के साथ नाश करने की पूरी व्यवस्था हो रही है।" कालशम्बर मान्त्रिक ने कहा।

"भद्र, आपकी जगह पर कैसे आ सका?" धूमक ने बड़े आश्चर्य के साथ पूछा।

"यहाँ वह बड़े लम्बे रास्ते से आया। तुम नाना कष्ट झेलते, छोटे रास्ते से यहाँ पहुँचे हो। जैसे जंगल में विरूप आदि ने तुम्हारी मदद की है, वैसे कई और ने उसकी मदद भी की थी।" कालशम्बर ने कहा।

"सकुशल है, मन्त्री गंगाधर के लड़के शशिकान्त का हाल क्यों नहीं पूछते हो? उसके घावों को मैंने औषधियाँ लगाकर ठीक कर दिये हैं। परन्तु जंगल के गाँवों में जब राक्षसों ने हमला किया, तो वह उनके हाथ में आ गया और मैं बच गया। अब वह कान्तिसेना के साथ महाकलि राक्षस के यहाँ कैद है। कैद में वे दोनों आपस् में खूब प्रेम कर रहे हैं। पर यह ऐसी बात है, जो मुझे बिल्कुल समझ में नहीं आती है।" कहते हुए विरूप की ओर सिर मोड़कर कालशम्बर मान्त्रिक ने आँखें बनाईं।

थोड़ी देर तक चुप्पी रही। महाकलि को मारने के लिए मान्त्रिक ने क्या चाल चली थी, धूमक को पता नहीं लग रहा था। उसकी दृष्टि में इसके लिए दो ही दो मार्ग थे। एक बड़ी सेना के साथ आकर उसे युद्ध में पराजित करना, दूसरा, जैसा भी हो, उसे अकेला करके, यथाशीघ्र मार देना।

धूमक यह सोचकर, मान्त्रिक से कुछ पूछने ही वाला था कि सीढ़ियों पर से दो युवक भागे भागे आये। दोनों ने

"मगर ये सब औषधियाँ क्या हैं बाबू?" विरूप ने पूछा।

"राक्षसों के संहार के लिए इस्तेमाल होनेवाले हथियारों में ये मुख्य हैं। तुम जंगली आदमी हो न? एक एक पत्ते में एक एक जड़ में कितनी शक्ति होती है, यह बात तुम से छुपी हुई नहीं है।

धूमक भी उससे एक प्रश्न पूछना चाहता था। उसने मान्त्रिक से पूछा—"महामान्त्रिक! राजकुमारी कान्तिसेना सकुशल है न?"

जन्तुओं के चमड़े पहिन रखे थे। उनकी कमर में तलवारें लटक रही थीं।

उन्होंने धूमक और उसके साथियों को इस तरह देखा जैसे पूछ रहे हो। "ये कौन हैं?" मान्त्रिक ने सिर नीचे करके कहा—"भद्र, जो तुम कहना चाहते हो, कह दो। ये हमारे मित्र हैं। कदम्ब देश के रहनेवाले हैं। ये राजकुमारी कान्तिसेना की रक्षा के लिए इतनी दूर आये हैं।"

"राजकुमारी की रक्षा तो राक्षस ही कर रहे हैं। हमें शशिकान्त की रक्षा करनी है। वे महाकलि राक्षस के पिता की सौवीं वर्ष गाँठ के लिए तैयारियाँ कर रहे हैं। कल दुपहर एक बजे वह शुरु होगी और शशिकान्त के शिरच्छेद के साथ समाप्त होगी।" भद्र ने कहा।

"मेरे पिता को जिस आसानी से महाकलि ने मारा है, उस आसानी से वह शशिकान्त को नहीं मार सकेगा। कल सूर्यास्त से पहिले दण्डकारण्य में मैं सब राक्षसों का खातमा कर दूँगा। मैं अपने पिता की हत्या का बदला लेकर रहूँगा।

चलो, मैं स्वयं देखूँगा कि वे क्या करने की कोशिश कर रहे हैं।" कहते हुए कालशम्बर मान्त्रिक ने पैर को जोर से भूमि पर मारा और दान्त पीसता वह चल दिया।

पर्वत के पेट में कई गुप्त मार्गों से चलते हुए सब शिखर प्रान्त में पहुँचे। उस शिखर पर बड़े बड़े वृक्ष थे। उन पर तरह तरह की बेलें लिपटी हुई थीं। मान्त्रिक चुपचाप आगे गया और घनी बेलों को एक तरफ हटाकर उसने नीचे की ओर देखा। उसे पाताल दुर्ग और

उसके अन्दर के भवन उनके सामने के प्राँगण और मैदान....और वहाँ भोजन वोजन, मनोरंजन के लिए जो व्यवस्था राक्षस कर रहे थे, उसने देखा।

कालशम्बर टकटकी बाँधे कुछ देर तक उस ओर देखता रहा। फिर उसने सिर मोड़कर, अपने साथियों को आने का ईशारा किया। सब चुपचाप उसके पास गये। मान्त्रिक ने उन्हें पाताल दुर्ग दिखाया। उस किले पर सीधे सूर्य का प्रकाश नहीं पड़ रहा था, साँझ की सी मद्धम मद्धम रोशनी वहाँ थी।

"तो यह है पाताल दुर्ग। क्या यहीं वह क्रूर महाकलि रहता है?" धूमक ने पूछा।

"हाँ, पर कल सूर्यास्त तक वह और उसका किला मिट्टी में मिला दिये जायेंगे। मेरे पिता की आत्मा को शान्ति मिलेगी। अब तक मैं इसी जिद में रहा कि मैं महाकलि को अकेला मार दूँगा। यह काम बड़े से बड़े मान्त्रिक के लिए भी सम्भव नहीं है। केवल मन्त्र से भी सम्भव नहीं है, तन्त्र की आवश्यकता है। इस काम में भद्र ने मेरी बड़ी सहायता की है।" कालशम्बर मान्त्रिक ने कहा।

उसके बाद सब वहाँ से वापिस लौटे। मान्त्रिक आगे आगे था। वह पहिले रास्ते पर नहीं जा रहा था, किसी और रास्ते पर जा रहा था।

कुछ दूर उस तरह चलने के बाद एक बड़े तने के पास पहुँचा। उसे मुट्ठी बाँधकर उसने उसे दबाया। पेड़ में इतना बड़ा खोल हो गया कि एक आदमी उसमें से बाहर जा सकता था।

मान्त्रिक ने उस खोल में से उस तरफ देखा। धूमक आदि को उसने पास

बुलाया। धूमक ने उस खोल में से देखा, तो वह घबरा गया। उसने एक ऐसा दृश्य देखा, जिसकी उसने स्वप्न में भी कल्पना न की थी।

वहाँ एक बड़ा सरोवर था। उसके तट पर पेड़ के नीचे कुम्भीर बैठा था। उसके कुछ दूरी पर राजकुमारी कान्तिसेना कुछ भील स्त्रियों के साथ सरोवर के तट पर टहल रही थी।

"कान्तिसेना, कान्तिसेना" धूमक ने जोर से चिल्लाना चाहा। पर सम्भल गया। उसने कालशम्बर की ओर मुड़कर कहा—"राजकुमारी सकुशल है। उस पेड़ के नीचे जो कुम्भीर है, वह वही है न, जो उसे राजमहल से उठा ले आया था? राजकुमारी के साथ जो स्त्री है, वह कौन है?"

"वह स्त्री भीलों के नायक पुलिन्द की दसवीं जवान स्त्री है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।" विरूप ने कहा।

"पुलिन्द की पत्नी। यह तो मैं नहीं जानता हूँ। वह तो कह रही है कि वह कन्या है और महाकलि राक्षस उससे भी कान्तिसेना के साथ विवाह करने जा रहा है। वह सब से यह कहती फिरती है कि वह पाताल दुर्ग की महारानी है।" कालशम्बर मान्त्रिक ने कहा।

धूमक ने इस विषय में कुछ कहना चाहा। पर इससे पहिले कि वह कुछ कह सका कुम्भीर एक क्षण चारों ओर देखकर, तुरत उठकर, खड़े होकर, पत्थर की गदा को सिर पर रखकर, पेड़ के तने की ओर लम्बे लम्बे डग रखता चल पड़ा। (अभी है)

शक्ति सम्पन्न

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। पेड़ पर से शव उतारकर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुप-चाप श्मशान की ओर जाने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम्हें देखकर मुझे एक सन्देह हो रहा है। विक्रम देश के राजा महेन्द्र महाराजा के लड़के जयन्त की तरह कहीं तुम भी बुरी सोहबत में पड़कर यह निकृष्ट काम तो नहीं कर रहे हो? तुम्हें राजकुमार जयन्त की कहानी सुनाता हूँ। सुनो, तुम्हें थकान नहीं मालूम होगी। वह यूँ कहानी सुनाने लगा।

जब महेन्द्र विक्रम राज्य का राजा था, प्रजा तो सुखी थी, पर राजधानी में बहुत तेज़, चालाक, चोर कुछ रहा करते थे। धनी उनसे बड़ा डरा करते थे। मामूली

वेताल कथाएँ

लोग उनके बारे में तरह तरह की बातें किया करते थे। महेन्द्र का लड़का जयन्त बड़ा अक़्लमन्द था। वह बड़ा बहादुर और हिम्मती भी था। उसने भी उन चोरों के बारे में बहुत-सी बातें सुनी थीं। औरों के विश्वास की तरह वह न सोचता था कि चोर बहुत तेज़ थे। परन्तु वह जानना चाहता था कि वे कितने तेज़ और ताकतवर थे। उसने जैसे भी हो, उनसे परिचय करना चाहा।

इसलिए एक अमावसी रात में काले कपड़े पहिनकर, सारे शहर के सो जाने के बाद, चोर की तरह वह चुपचाप निकल पड़ा। वह अभी कुछ दूर गया था कि उसे एक काली आकृति दिखाई दी। "कौन हो तुम?" उसने पूछा।

"मैं चोर हूँ...." जयन्त ने कहा।

"मैं बड़ा चोर हूँ। मेरे साथ आओ।" पहिले व्यक्ति ने कहा।

जब दोनों मिलकर कुछ दूर गये, तो दो और व्यक्ति उनके साथ मिले। बड़े चोर ने जयन्त का उनसे परिचय कराया। "हमारी बिरादरी का ही है, पर उम्र और तजुर्बा काफ़ी नहीं है।"

"अरे....लड़के, चोरी का काम आसान काम नहीं है। अगर तुम चतुर चोर बनना चाहो, तो तुम में कोई असाधारण शक्ति होनी चाहिए।" चोरों में से एक ने कहा।

"तुम में असाधारण शक्तियाँ क्या हैं?" जयन्त ने चोरों से पूछा।

"कुत्ता जब भोंकता है तो वह क्यों भोंक रहा है, मैं जानता हूँ।" चोर ने कहा।

"छड़ी ज़मीन पर मारकर मैं कह सकता हूँ कि उसके नीचे क्या गड़ा है।" दूसरे चोर ने कहा।

"जिस आदमी को मैं एक बार देख लेता हूँ, भले ही वह कोई भी मेस बदल ले मैं उसे फिर पहिचान सकता हूँ।" तीसरे ने कहा।

जब उन तीनों ने अपनी अपनी खूबियों के बारे में बताया तो जयन्त को भी अपने बारे में कुछ बताना पड़ा। इसलिए उसने कहा—"मेरे पास शक्ति है, कोई किसी भी कठिनाई में हो, मैं उसकी रक्षा कर सकता हूँ।"

यह सुन चोर बड़े खुश हुए। "अगर यह बात सच है, तो तुम ही हमारे सरदार हो। तुम्हारी शक्तियों के मुकाबले में हमारी शक्तियाँ किस काम की हैं?" उन्होंने कहा।

"तुम लोगों ने अपनी शक्तियाँ तो बता दीं, पर मैं उनको देखकर खुश होना चाहता हूँ।" जयन्त ने कहा।

"यह कौन-सी बड़ी बात है? हमें कदम कदम पर उनसे काम लेना पड़ता है। बताओ, हम चोरी के लिए किस तरफ़ जायें। तब तुम ही हमारी शक्तियों के बारे में जान जाओगे।" चोरों ने कहा।

"तब छोटी मोटी जगह क्यों जाया जाय, चलो राजमहल में ही चलें।" जयन्त ने कहा।

चारों मिलकर राजमहल के पिछवाड़े में गये। चार दीवारी से वे बगीचे में कूदे। इतने में कुत्ता भोंका।

"यह हमें देखकर नहीं भोंका है। अपने मालिक को देखकर भोंक रहा है।" एक चोर ने कहा।

एक और चोर ने, बगीचे में ज़मीन पर जगह जगह टोककर कहा—"नीचे यहाँ सुरंग है, अगर हम गढ़ा खोदकर

लिए गये थे, तो वे झुण्ड बनाकर उनको देखने आये। परन्तु उनकी सुनवाई शुरु होने से पहिले ही जयन्त युवराज की पोषाक में आकर राजा के पास बैठ गया।

चोरों को राजा के पास लाया गया, उन तीनों के मुँहों पर क्रोध और दुख था। इतने में एक ने सिर ऊँचा करके जयन्त को देखकर औरों से कहा—"हमारा आदमी राजा के बगल में है। हमें कोई डर नहीं है।" तीनों चोर सन्तोष के साथ जयन्त की ओर देखने लगे।

सुरंग में पहुँच गये तो सुरंग में से हम राजमहल में पहुँच सकते हैं।"

बाग में खोदने के लिए फावड़े वगैरह होंगे। यह सोचकर जब तीनों चोर उन्हें खोजने चले गये, तो जयन्त पहरेदारों के पास गया। अपना मुख दिखाकर कहा—"बाग में, तीन बड़े चोर हैं। उन्हें जाकर पकड़ लो।" फिर वह महल में जाकर आराम से अपने कमरे में सो गया।

तीनों चोर पकड़ लिये गये। अगले दिन दरबार में उनकी सुनवाई हुई। जब लोगों को मालूम हुआ कि चोर पकड़

जयन्त ने पिता की ओर देखकर कहा—"ये मेरे मित्र हैं। उनको छोड़ दीजिये।" राजा ने एक क्षण आश्चर्य पूर्वक अपने पिता की ओर देखा। फिर उसने चोरों को छोड़ देने की आज्ञा दी। चोर, जयन्त को और राजा को नमस्कार करके अपने रास्ते चले गये।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। जयन्त ने उन चोरों को क्यों छुड़वा दिया? चोरों को पकड़कर, दण्ड देना राजाओं का कर्तव्य है न? उसने अपने कर्तव्य का क्यों नहीं

पालन किया? यही नहीं, उसने क्यों कहा कि वे चोर उसके मित्र थे। यह चोरों की सोहबत में आने के कारण उसका दुर्गुण था, या इसका कोई और कारण है? अगर तुमने इन प्रश्नों का जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"इन बातों में चोरों की सुनवाई और सजा की बात ही नहीं उठती है। चोरों को क्यों सजा दी जाती, जब उन्होंने अभी कोई चोरी नहीं की थी, अगर उनको पकड़वाना ही जयन्त का उद्देश्य था, तो उसे राजदरबार में आने की जरूरत ही न थी। तीनों चोरों की वह परीक्षा ले रहा था। दो की शक्ति तो जयन्त ने अपनी ही आँखों देख ली थी। तीसरे की शक्ति को जयन्त को देखना था। इस परीक्षा के लिए जयन्त ने पहरेदारों से उन्हें पकड़वाया था, वह चोरों को स्वयं महल में लाया था और उसने स्वयं पहरेदारों से कहकर उनको पकड़वाया था, फिर भी वह अपने कमरे में जाकर सो गया, अगर उसके मन में कोई दुरुद्देश्य होता, तो वह ऐसा न कर पाता। दरबार में, तीसरे चोर ने उसको केवल पहिचाना ही नहीं, पर यह विश्वास भी जताया कि वह उनकी मदद करेगा। इसलिए ही उसने अपने पिता से कहा था कि वे उसके दोस्त थे। सब प्रकार से जयन्त का व्यवहार और बुद्धि सूक्ष्मता प्रशंसनीय थी।"

राजा का इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

दो शिकारी

एक गाँव में शरभ नाम का एक शिकारी था। वह बड़े घराने का था। इसलिए वह प्रायः शिकार के लिए जाया करता और वह गौरीनाथ को साथ ले जाया करता। वह गरीब परिवार का था।

गौरीनाथ को भी शिकार का बड़ा शौक था। शिकार के लिए जरूरी बन्दोबस्त गौरीनाथ ही किया करता। शरभ उससे यह कर, वह कर, बस इस तरह के हुक्म ही किया करता।

एक दिन गौरीनाथ को साथ लेकर, शरभ जंगल में गया। शरभ जब एक पेड़ के नीचे आराम कर रहा था, तो गौरीनाथ ने एक जगह एक बड़ा गढ़ा खोदा। उस पर पत्ते और घास डालकर वह चला आया।

अगले दिन जब वे वहाँ गये तो उन्होंने देखा कि उसमें एक जंगली बिल्ली फंस गई थी।

"अगर इसमें भी तुम्हें हिस्सा दिया, तो तुम्हें क्या मिलेगा? दुबली पतली जंगली बिल्ली है। मैं ही इसलिए इसे ले लेता हूँ।" शरभ ने गौरीनाथ से धीमे कहा।

"नहीं, तुम ही उस बिल्ली को रख लो। जो कुछ कल गिरेगा मैं उसे ले लूँगा।" कहकर शरभ ने जंगली बिल्ली गौरीनाथ को दे दी।

गौरीनाथ ने फिर गढ़े पर पत्ते और घास बिछा दी और घर चले गये।

अगले दिन जब आकर उन्होंने देखा, तो उसमें एक हरिण फंस गया था।

बी. वरलक्ष्मी

"आज मेरी बारी है। इस हरिण को मैं लिये लेता हूँ।" शरभ ने खुशी खुशी कहा।

"तो, आप ही ले लीजिये। कल इसमें साँड़ पड़ सकता है। मैं उसे ले लूँगा।" गौरीनाथ ने कहा।

शरभ की खुशी काफ़ूर हो गई।

"तो तुम इस हरिण को भी ले लो। जो कुछ कल इसमें पड़ेगा, वह मेरा होगा।" शरभ ने कहा।

अगले दिन सचमुच मोटा, ताज़ा साँड़ उसमें गिर पड़ा था। शरभ की खुशी का ठिकाना न था।

"इसे मैं ले लूँगा। आज मेरा बारी है न?" उसने कहा।

"इसको आप ही ले लीजिये। कल मेरे हिस्से में हाथी आ सकता है। हाथी के लालच में मैं बहुत दिनों से बैठा हूँ।" गौरीनाथ ने कहा।

"मुझे भी हाथी चाहिए। आज का हिस्सा भी तुम ले लो। कल अगर हाथी गिरा तो मैं उसे ले लूँगा।" शरभ ने जबर्दस्ती की।

अगले दिन जब उन्होंने जाकर देखा तो गढ़े में सचमुच एक हाथी

गिरा हुआ था, शरभ की खुशी का ठिकाना न था।

"देखो गौरी, सूझबूझ हो तो मेरी जैसी हो। लगातार तीन दिन तुम्हें अपना हिस्सा देकर, मैंने हाथी ले लिया है। इसके दान्तों के लिए ही ढ़ेर-सा धन मिलेगा।" उसने गौरी से कहा।

"इस हाथी को आप ही रखिये। कल इस गढ़े में ढ़ेर से अमूल्य पत्ते गिरेंगे। उन्हें मेरे लिए छोड़ दीजिये।" गौरीनाथ ने कहा।

"असंख्य पत्तों का क्या करोगे? आश्चर्य हो रहा है। उनका क्या करोगे?" शरभ ने पूछा।

"बेच लूँगा, तुम नहीं जानते? हर कोई बड़ी खुशी खुशी लेगा।"

"तो तुम इस हाथी को ले लो और मुझे अमूल्य पत्ते दे दो। हम दोनों अच्छे दोस्त जो हैं।" शरभ ने कहा।

"आप हाथी रख लीजिये। पत्ते मुझे छोड़ दीजिये।" गौरीनाथ ने समझाकर कहा।

"नहीं, इस हाथी को आप ही रख लो, हमें पत्ते दे देना।" गौरीनाथ ने कहा।

"नहीं, हाथी तुम ही ले लो।" शरभ ने जिद् पकड़ी।

अगले दिन जब वे गढ़े के पास गये, तो उसमें ढ़ेर से पत्ते झड़ गये थे। शरभ ने उनको गट्ठर में बाँध लिया। हाँफता हाँफता उनको हाट में ले गया। जब उसने उनको बेचने की कोशिश की, तो सब उसे देखकर हँसे।

दो पिताओं का पुत्र

एक छोटे-से गाँव में सन्तराम नाम का एक किसान रहा करता था। उसके पास थोड़ी बहुत जमीनं थी। वह उसी में खेती कर कराकर अपना गुजारा किया करता। उसकी शादी हो गई। गृहस्थी के दस साल हो गये थे। पर उनकी कोई सन्तान न हुई।

उस गाँव के पास नदी के किनारे, एक दिन एक शिवलिंग दिखाई दिया। ग्रामाधिकारी ने ग्राम में एक शिवालय बनाकर, उसकी स्थापना करने का निश्चय किया। ग्रामवासियों से उसने इस कार्य के लिए यथाशक्ति सहायता देने की प्रार्थना की। बच्चों के लिए सन्तराम ने पहिले ही कितनी मनौतियाँ कर रखी थीं। अब उसने शिवालय के लिए द्वार बनवाने का निश्चय किया।

एक दिन सवेरे सन्तराम कुल्हाड़ी कन्धे पर रख, चन्दन के पेड़ के लिए जंगल में निकल पड़ा। सौभाग्यवश उसे एक बड़ा चन्दन का पेड़ दिखाई दिया। पर पास ही एक राक्षस था। उसने कहा—"तो मिल गये हो? बड़ी भूख लग रही है। मैं तुम्हें अभी खाये देता हूँ।"

"मैं भगवान के काम पर आया हूँ। मुझे मारना तुम्हें शोभा नहीं देता।" सन्तराम ने कहा।

"मेरे पेड़ के नीचे जो कोई आता है, उसे खाने का मुझे अधिकार है। अगर भगवान के काम पर आये हो, तो मेरा पेड़ तुमने क्यों छुआ?" राक्षस ने पूछा।

सन्तराम की आँखों से आँसू बह उठे। यह देख राक्षस ने कहा—"तुम्हारे आँसू

देखकर, तुम सोच रहे हो कि मैं तुम पर दया करूँगा ?"

"मैं अपने लिए नहीं रो रहा हूँ। मैं अकेला हूँ और तुम बड़े भूखे मालूम होते हो। अगर तुम मुझे खा बैठे, तो तुम्हारी आधी भूख भी नहीं भरेगी। मेरे बच्चे नहीं है। इसलिए मैं और मेरी पत्नी, चाहे कितने साल भी जीयें कोई फायदा नहीं हैं। अगर मेरी पत्नी मेरे साथ होती, तो तुम्हारी भूख पूरी तरह मिट जाती। अगर तुम्हारी भूख मिट जाती, तो इस पुण्य के कारण ही, कम से कम अगले जन्म में तो बच्चे मिलते, यह सब नहीं होगा, इसलिए ही मैं इस खेद में आसूँ बहा रहा हूँ।" सन्तराम ने कहा।

राक्षस ने कुछ देर सोचकर कहा—"बीस साल से, जो छोटे मोटे प्राणी इस पेड़ के नीचे आते हैं मैं उनको खाकर, अपना पेट भर रहा हूँ। अगर मुझे पेट भर खाना मिलेगा, तो मैं बीस साल और इन्तज़ार करूँगा। जो मैं कहूँ, वह करो। इस पेड़ पर से मैं एक टहनी देता हूँ। उसे ले जाओ। उसे पीसकर अपनी पत्नी को खाने को दो। तब उसके एक लड़का

होगा। उसके बीस साल के होते ही उसका विवाह करना। उसके बाद, तुम तुम्हारी पत्नी, लड़का और बहू सब मिलकर आना। मैं तुम चारों को खाकर अपना पेट भर लूँगा।"

सन्तराम इसके लिए खुशी खुशी मान गया। द्वार के लिए आवश्यक लकड़ी राक्षस से पेड़ पर से काटने की अनुमति माँगी। राक्षस मान गया और अदृश्य हो गया।

थोड़े समय में, सन्तराम ने मन्दिर के लिए द्वार तैयार कर दिया और इस बीच सन्तराम की पत्नी गर्भवती हो गई और यथा समय उसके लड़का भी हुआ। उसका नाम भद्र रखा गया। वह ज्यों ज्यों बड़ा होता गया त्यों त्यों लोगों का लाड़ला होता गया। ग्रामाधिकारी के कई बच्चे हुए पर एक ही बचा। वह भी भद्र की उम्र का था। दोनों एक साथ घूमा फिरा करते।

वे दोनों जब दस साल के थे, तो पहाड़ पर गये। जब वे पहाड़ पर चढ़ रहे थे, तो ग्रामाधिकारी के लड़के का पैर फिसला और वह नीचे खड्ड में जा गिरा। भद्र ने जाकर ग्रामाधिकारी से इस घटना के

गुज़रे हैं। उसके लिए कौन जिम्मेवार था? क्यों उस बच्चे से यूँ बदला लेते हो?"

पर ग्रामाधिकारी का शोक यूँ कम न हुआ। सच कहा जाये, तो वह भद्र को बहुत चाहता था। जब कभी वह उसके लड़के के साथ घूमा फिरा करता, तो उन दोनों को देख वह सोचता कि उसके दो लड़के थे। इसलिए उसने एक शर्त रखी। शर्त यह थी कि भद्र ६ मास तक उसके लड़के के तौर पर रहे और ६ मास सन्तराम के लड़के के तौर पर।

इस समझौते पर सब बड़े खुश हुए। सन्तराम इसके लिए मान गया। इस पर सन्तराम को कोई आपत्ति न थी। भद्र की धाक बढ़ी। एक दिन दुपहर को यह व्यवस्था पूरी हो गई।

भद्र के जब अठारह वर्ष हो गये, सन्तराम ने साथ के किसान के घर एक अच्छी लड़की देखी और भद्र का उसके साथ विवाह कर दिया और जब समझौते के मुताबिक भद्र ग्रामाधिकारी के घर गया, तो उसने एक बड़े घर की लड़की से उसका विवाह कर दिया। दोनों बहुयें भद्र के दोनों माँ बापों के यहाँ रहने लगीं। भद्र

बारे में कहा। ग्रामाधिकारी को अपने लड़के का शव मात्र मिला।

"मेरे लड़के की मृत्यु का कारण भद्र ही है। मेरे एक ही लड़का था और उसको तुम्हारे लड़के ने मार दिया और अब मेरी उम्र इतनी नहीं है कि मेरे बच्चे हों। जब तक सन्तराम का बच्चा नहीं मर जाता, तब तक मेरा दुःख न जायेगा।" ग्रामाधिकारी दुःख के पागलपन में बड़ बड़ाया।

गाँववालों ने उसे आश्वासन देते हुए कहा—"तुम्हारे इससे पहिले भी बच्चे

जिस घर में रहता, उस घर की स्त्री से गृहस्थी निभाता।

भद्र सन्तराम के घर ही बीस वर्ष का हुआ। सन्तराम को राक्षस को दिया हुआ वचन याद आया। अपनी पत्नी, लड़के और गर्भवती अपनी बहू को लेकर, सन्तराम राक्षस के पास गया। जब वे चन्दन के पेड़ के पास पहुँचे, तो दुपहर हो गई।

जब चारों पेड़ के नीचे पहुँचे, तो राक्षस आया। उसने सन्तराम से कहा—"तुम सचमुच बड़े ईमानदार हो। तुम अपना वचन नहीं मुकर रहे हो। तुम सब को मिलाकर मैं खा लूँगा। पेट भर लूँगा।"

"पर एक कठिनाई है। यह कुछ क्षणों से मेरा लड़का नहीं रहा है। ग्रामाधिकारी का लड़का है।" जो कुछ हुआ था, सन्तराम ने बता दिया।

"अच्छा, तो उस हालत में तुम्हें तुम्हारी पत्नी और बहू को मैं खा लूँगा।" राक्षस ने कहा।

"मेरी बहू को भी तुम्हें नहीं खाना चाहिये। वह गर्भवती है। उसके गर्भ का शिशु, ६ मास के लिए ग्रामाधिकारी का पोता या पोती होगी। मुझे और मेरी पत्नी को खाकर तसल्ली कर लो।" सन्तराम ने कहा।

"इतने समय तक प्रतीक्षा करना यानि बेकार रहा।" खिझकर राक्षस अदृश्य हो गया।

सन्तराम अपनी पत्नी, लड़के और बहू को साथ लेकर घर चला आया।

लकड़ी की तलवार

एक राजा के पास पतंग नाम का सेवक था। उसे सैनिक शिक्षा प्राप्त थी। चुस्त भी दिखाई देता था। पर उसकी उम्र इतनी न थी कि वह सैनिक के तौर पर काम करे। इसलिए राजा ने उसको राजमहल के एक द्वार पर रात को पहरा देने के लिए नियुक्त किया।

राजा रात में कभी कभी उठकर देखा करता कि पहरेदार ठीक तरह काम कर रहे हैं कि नहीं। एक बार जब वह निरीक्षण के लिए निकला तो उसने देखा, तो पतंग, तलवार बगल में रखकर दीवार के सहारे सो रहा था। राजा ने निश्चय किया कि सब के सामने उसे दण्ड देगा। इसलिए उसने उसे उठाया नहीं। उसकी मियान में से तलवार लेकर वह चला गया।

थोड़ी देर बाद पतंग ने उठकर तलवार खोजी। पर उसे केवल मियान ही दिखाई दी। पहरेदार के लिए अपनी तलवार खो बैठना, बड़ा अपराध था। इसके लिए उसकी मृत्यु की सज़ा दी जा सकती थी। पहरेदारों को आयुधागार से तलवारें दी जाती थीं। काम के बाद पहरेदारों को वे तलवारें आयुधागार को लौटा देनी पड़ती थीं। प्रातःकाल सूर्योदय के समय, काम से जाने से पहिले पहरेदारों को राजा के सामने हाजिर होना पड़ता था। इसलिए जरूरी था कि पतंग कहीं से वह तलवार लाकर दिखाये, नहीं तो उसी का सिर कटेगा।

राजमहल के पास ही पतंग का एक बढ़ई दोस्त था, वह उसके पास भागा

भागा गया। उसे उठाया और उसे बताया कि उसके सिर पर आफत आ पड़ी थी। उसने जो कुछ गुज़रा था, उसे बताया।

"अरे, तूने अच्छी आफत मोल ली। मैं भी क्या कर सकता हूँ? लकड़ी की एक तलवार बनाकर दे देता हूँ। क्योंकि मूठ ही तो बाहर दिखाई देती है, इसलिए उसको बड़ी होशियारी से बनाऊँगा। आज जब बात टल जाये, तो कल राजा से फरियाद करना कि तुम्हारी तलवार कोई चुरा ले गया है और नयी तलवार ले लेना।" बढ़ई ने कहा।

उसने सवेरे होने से पहिले एक छोटी तलवार बनाकर दी। उसकी मूठ से ऐसा लगता था कि वह सचमुच तलवार हो, वह बड़ी सुन्दर और पक्की थी।

सूर्योदय के बाद और पहरेदारों के साथ पतंग भी राजा के निरीक्षण के लिए पंक्ति में खड़ा हुआ। थोड़ी देर बाद राजा आया। प्रायः वह पहरेदारों को देखने अकेला ही आया करता था। पर उस दिन सैनिक एक कैदी भी साथ लाये।

राजा ने पहरेदारों को उस कैदी को दिखाकर कहा—"यह राजद्रोही है, इसे
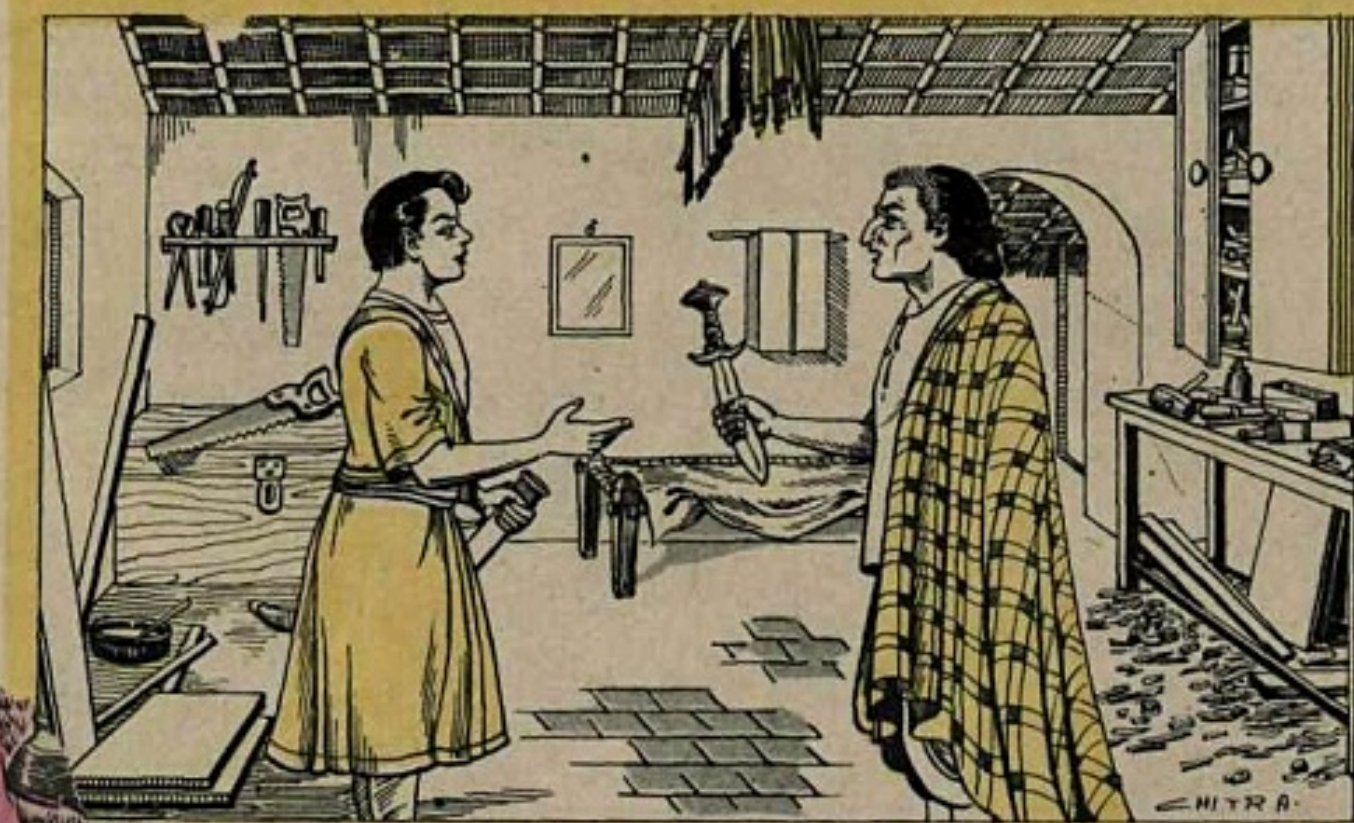
मौत की सज़ा दी गई है। मैं चाहता हूँ कि यह दण्ड मेरे सामने ही इसे दिया जाय।" यह कहते हुए उसने पहरेदारों को एक नज़र से देखा। पतंग पर उसकी दृष्टि रुकी। "तुम आकर इस दुष्ट का सिर काट दो।"

पतंग को लगा, जैसे उसके हृदय की धड़कन यकायक बन्द हो गई हो। उसके पास जो लकड़ी की तलवार थी, उससे सिर तो कटता ही नहीं, बल्कि सब को मालूम भी हो जाता कि उसके पास झूट मूट की तलवार थी।

"महाराज! यह काम किसी और को मेहरबानी करके सौंपिये।" उसने घबराते हुए कहा।

"तुम मेरी आज्ञा का धिक्कारते हो?"

"नहीं महाराज! मैं सैनिक हूँ। मै जल्लाद का काम नहीं कर सकता। मैं निहत्थे कैदी पर हाथ नहीं उठा सकता।" पतंग ने कहा।

"अगर यह पाप है, तो यह पाप मेरा है। अगर तुमने मेरी आज्ञा का पालन न किया, तो तुम्हें मौत की सजा मिलेगी।" राजा ने क्रुद्ध होकर कहा।

पतंग ने आँखें बन्द कर लीं और हाथ जोड़कर कहा—"माँ, भवानी, मुझे इस आपत्ति से बचाओ। अगर मैं अपराध करने जा रहा हूँ, तो मेरी तलवार को लकड़ी की तलवार बना दो।" उसने झट मियान में से तलवार निकाली। उसमें लकड़ी की तलवार ही थी। पहरेदार सब जोर से हँसे। राजा भी हँसी न रोक सका उसने पतंग का अपराध माफ़ कर दिया। उसकी सूझबूझ को सराहा। उसको पहरे से हटाकर उसने अपना अंगरक्षक नियुक्त किया।

पगड़ी की आज्ञा

जब से मणिमंगल राज्य की गद्दी पर जयन्धर का पट्टाभिषेक हुआ था, तब से "पगड़ी की आज्ञा" अमल में आने लगी थी। आज्ञा यह थी कि जब कोई आदमी घर से बाहर आये, तो पगड़ी ऐसी बाँधे कि उसका एक सिरा उसकी दाहिनी आँख को छुपाये। कहा गया कि जो कोई इस आज्ञा का उलंघन करेगा, उसे मृत्यु दण्ड दिया जायेगा।

इस आज्ञा के पीछे भेद यह था कि जयन्धर की दाहिनी आँख अन्धी थी, इसलिए वह बचपन से इस तरह पगड़ी बाँधता था कि दाहिनी आँख छुप जाती थी। अब चूँकि वह राजा बन गया था, इसलिए उसे रोज दरबार में आना पड़ता। दरबार में यदि वह दाहिनी आँख पर पगड़ी बाँधकर गया, तो सबको उसका भेद पता लग जाता। उतने लोगों में यदि सिर्फ उसने ही इस तरह पगड़ी बाँधी तो बुरा लगता। उसकी समस्या देख राजपुरोहित ने उसे पगड़ी की आज्ञा के बारे में बताया।

तब क्या था? राजा होते ही, जयन्धर ने पगड़ी के बारे में आज्ञा निकलवा दी। तब से दरबार में, सभी उसी तरह पगड़ी बाँधने लगे, जिस प्रकार वह बाँधा करता था, राजा की पगड़ी अजीब-सी न लगती। गलियों में भी सब उसी तरह की पगड़ियाँ बाँधकर निकला करते। इसलिए अगर परदेशी भी कभी आते, तो राजा की पगड़ी उनको अजीब न लगती।

स्नेह कुमार

सब को सिर्फ एक आँख से देखने में ही दिक्कत होती। परन्तु राजा और बातों में बड़ा अच्छा था। शासन में भी कोई कमी न थी। इसलिए लोगों ने पगड़ी की आज्ञा का उल्लंघन न किया। पर कठिनाई यह थी कि जो और राज्यों से उस राज्य में आते थे, उन पर भी पगड़ी की आज्ञा लागू होती थी। उन्हें भी दाहिनी आँख पर पगड़ी बाँधनी पड़ती थीं। उन्हें इस आज्ञा के कारण बड़ी असुविधा होती।

जयन्धर का धुरन्धर नाम का लड़का था। उसकी एक आँख, पिता की तरह अन्धी न थी। वह बड़ा सुन्दर था। उसकी आँखें भी बड़ी सुन्दर थीं। पर जब वह घर से बाहर निकलता, तो वह भी पगड़ी की आज्ञा का पालन करता।

धुरन्धर जब सयाना हुआ, तो देश में घूमने निकल गया। वह भिन्न भिन्न देशों में, उसके लायक कोई लड़की मिलती है कि नहीं, यह जानना चाहता था। कुछ मास घूमने फिरने के बाद, उसको कंजर राजकुमारी का सौन्दर्य जँचा। स्वदेश पहुँचकर उसने अपने पिता से कहा कि उसे कंजर राजकुमारी जँची थी और वे भी विवाह करने के लिए तैयार थे और कंजर मन्त्री भी इस सिलसिले में बातचीत करने के लिए आ रहा था। जयन्धर बड़ा खुश हुआ कि उसके लड़के को मन पसन्द लड़की मिल गई थी।

निश्चित दिन कंजर मन्त्री, दो सैनिकों से उपहार उठवाकर, मणिमंगल की राजधानी में आया। वह वृद्ध था, परन्तु उसने पगड़ी इस तरह बाँध रखी थी, ताकि बाईं आँख न दिखाई दे। उसके आते ही, राज-कर्मचारियों ने उसका स्वागत किया। "आपने बायीं आँख पर पगड़ी बाँध रखी है। परन्तु हमारे

जादू की चाबुक

एक समय था, जब केरल में मामूली आदमी भी मन्त्र विद्यायें सीखा करते थे। परन्तु आजीविका के लिए कुछ और काम किया करते।

एक कुँवर के पास एक गाड़ी चलानेवाला था। वह केवल उसकी गाड़ी हाँका करता। कुँवर के पास तीस घोड़े थे। उनकी देखभाल के लिए अलग आदमी थे।

एक बार कुँवर कहीं जा रहा था कि एक जगह घोड़े यकायक रुक गये, गाड़ीवाले ने उन्हें बहुत उकसाया, पर उन्होंने एक कदम भी आगे न रखा।

गाड़ीवाले ने जब सिर उठाकर देखा, तो एक छत पर, छत बनानेवाला छत बना रहा था। गाड़ीवाले ने उससे कहा—"अरे भाई, हमें जाने दो न?"

उस आदमी ने छत से उतरकर पूछा—"क्या मुझ से पूछ रहे हो? मैं अपने काम पर लगा हुआ हूँ। क्या मैंने तुमको रोका है? बखुशी जाओ।"

गाड़ीवाले ने कुछ न कहा। उसने चाबुक निकाला, उस पर तीन बार फूँका, फिर उससे जोर से घोड़ों को मारा। तुरत छत का आदमी छटपटाया और चिल्लाकर नीचे गिर पड़ा।

यह सब कुँवर अपनी आँखों स्वयं देख रहा था। वह जान गया कि यह गाड़ीवाले की करतूत थी। उसको उसने अपने यहाँ न रखना चाहा, उसे एक साल का वेतन देकर उसे भेज दिया।

गाड़ीवाले के भेज दिये जाने के बाद घोड़ों का व्यवहार विचित्र-सा हो गया, वे

किसी को अपने पास न आने देते। जब कोई बाल्टी में दाना पानी ले जाता, तो वे पिछले पैरों पर खड़े हो जाते, हिनहिनाते और आगे के पैरों से उनको मारने की कोशिश करते। उन्होंने तीन दिन तक कुछ न खाया पिया ही। नौकरों ने जाकर कुँवर को इसकी सूचना दी।

कुँवर जान गया कि यह भी उस गाड़ीवाले की करतूत थी। उसने एक आदमी से उसको बुलवाया, उसने जाकर गाड़ीवाले से कहा—"मालिक तुम्हें बुला रहे हैं।"

"वे अब मेरे मालिक नहीं है। कह देना कि मैं घर में नहीं हूँ।" गाड़ीवाले ने यह कहकर कुँवर के आदमी को भेज दिया। दुपहर के बाद एक और आदमी ने आकर कहा कि मालिक बुला रहे हैं।

"मालिक का मुझे भेज देन
कानों तक आया है, पर बुलाना
आया है।" गाड़ीवाले ने कहा।

आखिर कुँवर स्वयं शाम को उसे बुला लाये। जब वह आया, तो उसने अस्तबल में हर चीज़ अस्त व्यस्त पाई। गाड़ीवाले ने अपनी पुरानी चाबुक दीवार पर से उतारी और घोड़ों के पास आकर उसने कहा—"अरे क्या बात है?" फिर उसने चाबुक हवा में चलाई और नौकरों से कहा—"दाना लाकर दो, देखता हूँ कि कैसे नहीं खाते हैं।"

ऐसा लगा जैसे घोड़ों का भूत उतर गया हो। वे झट दाना-पानी इस तरह चटकर गये, जैसे कुछ जानते ही न हों। कुँवर ने गाड़ीवाले का वेतन बढ़ा दिया और उसके बूढ़े होने तक उसको नौकरी में रखा।
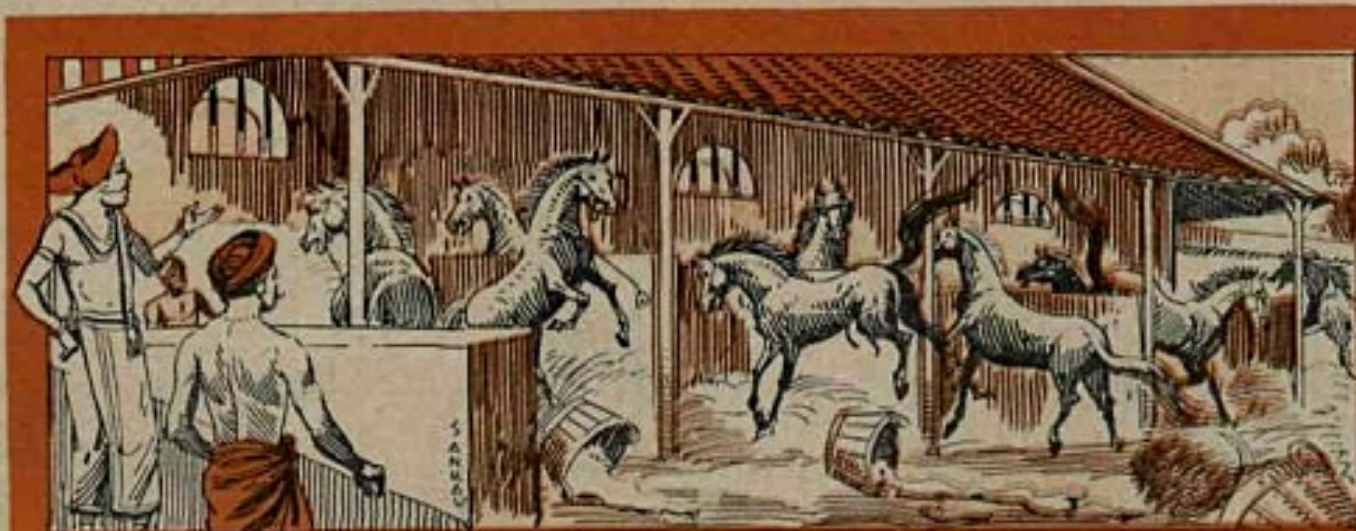
राज्य में यह आज्ञा है कि दायीं आँख पर पगड़ी बाँधी जाये। आप भी दायीं हाथ पर पगड़ी पहिनें, यह हमारा निवेदन है।"

"तो यह बात है? परन्तु मुझे बायीं आँख से दिखाई नहीं देता है, इसलिए ही मैंने उस पर पगड़ी बाँध रखी है। अगर मैंने आपकी आज्ञा के अनुसार दाहिनी आँख पर भी पगड़ी बाँध ली, तो मुझे बिल्कुल नहीं दिखाई देगा। क्या किया जाय?" वृद्ध मन्त्री ने पूछा।

राजकर्मचारियों ने मन्त्री से कहा कि पगड़ी की आज्ञा बड़ी कठिन थी। कोई भी किसी भी परिस्थिति में उसका उल्लंघन नहीं कर सकता था। यदि दाहिनी आँख पर पगड़ी बाँधने से उसे कुछ नहीं दिखाई देने की सम्भावना है, तो क्यों नहीं असली अन्धे की तरह किसी का सहारा लिया जाय।

और कोई रास्ता न था, कंजर मन्त्री ने आज्ञा के अनुसार पगड़ी बाँधी, किसी के सहारे वह राजदरबार में पहुँचा। "राजा, आपके लड़के से हमारी राजकुमारी के विवाह के बारे में आपसे बात करने आया हूँ। इतनी बड़ी बात पर बातचीत

हमारे देश की आज्ञा को जानते हुए भी यदि आपके राजा ने एक अन्धे मन्त्री को भेजा है, तो क्या यह हमारा अपमान नहीं है? आओ युद्ध करो। युद्ध में तुम्हें जीतकर, तुम्हारी राजकुमारी को जीतकर, युवराज से उसकी शादी कर देंगे। देखें तुम क्या करते हो!"

उसने तुरत आज्ञा दी कि कंजर मन्त्री को कैद कर लिया जाये और मन्त्री के साथ आये हुए लोगों से कहा—"तुम जाकर अपने राजा से युद्ध के लिए तैयार होने के लिए कहो।" फिर उसने अपने सेनाधिपति को बुलाकर आज्ञा दी, युद्ध की तैयारियाँ पूरी करके कंजर राज्य पर आक्रमण करो।

करने के लिए मैं आया था, पर आपके कर्मचारियों ने पगड़ी के शासन के कारण मुझे अन्धा बनाकर, मेरा अपमान किया। इस तरह उल्टी सीधी आज्ञा निकालनेवालों के साथ हमारे राजा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध न करना चाहेंगे। यही नहीं, इस अपमान के लिए हम आप पर आक्रमण करके अपना बदला लेंगे। इसके लिए तैयार रहिये।" यह कहकर मन्त्री पीछे हटा।

यह सुनकर जयन्धर आगबबूला हो उठा। "लड़कीवालों को इतना अभिमान?

सेनाधिपति सेना के साथ गया और कुछ दिनों बाद, अकेले वापिस आकर उसने कहा—"महाराज, हमारे सब सैनिक शत्रु द्वारा पकड़ लिए गये हैं। मैं जैसे तैसे बच बचाकर निकल आया हूँ और यह खबर आपको देने आया हूँ।"

राजा ने चकित होकर पूछा—"इतनी भयंकर पराजय कैसे हुई? इस अपमान का क्या कारण है?"

"माफ़ कीजिये, महाराज! हमारी पगड़ी की आज्ञा के कारण ही हमारी यह हालत हुई। हमारे सैनिक दायीं आँख पर पगड़ी बाँधकर युद्धभूमि में उतरे। वे यह तो जान जाते थे कि बाईं ओर क्या था, पर दाहिनी ओर क्या हो रहा था, यह वे न जान पाये। यह बात शत्रु को मालूम हो गई। वे दाहिनी ओर से आये। हमारे सैनिकों पर हमला करके उनके हथियार ले गये और उनको आसानी से पकड़ लिया। अब कंजर राजा अपनी सेना के साथ हमारे राज्य पर आक्रमण करने के लिए आया है।" सेनाधिपति ने कहा।

"अब क्या किया जाय?" राजा ने मन्त्री से पूछा।

"तुरत पगड़ी की आज्ञा रद्द कर दीजिये। कम से कम राजमहल के सैनिक उनका ठीक तरह मुकाबला कर सकेंगे और कंजर मन्त्री को रिहा करके, उनसे माफ़ी माँगकर उनको भेज दीजिये। वह जाकर कंजर राजा से कह देगा कि पगड़ी की आज्ञा रद्द कर दी गई है। इसके बाद उनसे जैसे तैसे

समझौता किया जा सकता है।" मन्त्री ने कहा।

राजा ने कुछ देर सोचकर कहा—"यह सलाह तो अच्छी है। मैं फौरन पगड़ी का आज्ञा रद्द करता हूँ। मन्त्री को छोड़ दो और उस कैद में राजपुरोहित को रखो। पगड़ी की आज्ञा के पीछे उस राजपुरोहित की ही सलाह थी।"

तुरत मन्त्री ने अपनी पगड़ी ठीक कर ली, दरबार में जितने लोग उपस्थित थे, उन सबने अपनी पगड़ियाँ ठीक कर लीं। राजकुमार स्वयं कंजर मन्त्री को जेल से छुड़ाने के लिए गया। मालूम हुआ कि उसकी दायीं आँख अन्धी न थी। उसकी दोनों आँखें ठीक थीं।

यह सब मेरा खेला हुआ ही नाटक था, ताकि पगड़ी की आज्ञा रद्द हो जाये। इस नाटक में, कंजर मन्त्री और सेनाधिपति ने, जो कुछ किया था, उसकी सलाह पर ही किया था। मणिमंगल की सेना की कहीं पराजय न हुई थी। युद्ध ही नहीं हुआ था, राजकुमार ने यह सब अपने पिता से कहकर उससे क्षमा माँगी।

अगर पगड़ी की आज्ञा अमल में रहती, और युद्ध होता, तो सचमुच ही बहुत नुक्सान होता, राजा को यह सोच अपनी गलती मालूम हुई। उस आज्ञा को रद्द करने के लिए उसके लड़के ने जो नाटक खेला था, उसके लिए उसने उसको क्षमा ही नहीं किया, बल्कि उसकी प्रशंसा भी की।

इसके बाद धुरन्धर और कंजर राजकुमारी का वैभव के साथ विवाह हुआ। मणिमंगल की जनता, दोनों आखों से उस विवाह को देखकर आनन्दित हुई।

बेकार पैसा

एक देश में एक बड़ा रईस रहा करता था। उसने अपना सारा धन तीन पीपों में रखकर, तहखाने में रखवा दिया। उसने एक पीपे में सोना रखा। दूसरे पीपे में चान्दी के सिक्के और तीसरे में उसने ताम्बे के सिक्के रखे।

उस देश पर, बाहर के देशवालों ने आक्रमण किया। जब उनका देश पर कब्जा बढ़ता गया तो धनी ने देश छोड़कर भाग जाने का निश्चय किया। वह धन के पीपों को साथ ले नहीं जा सकता था, उन पर उसने मोम बिछवा दी। तहखाने में उसने ताला भी नहीं लगवाया। वह सपरिवार देश छोड़कर भाग गया।

थोड़े दिनों बाद शत्रु सेना ने आकर धनी के शहर पर कब्जा कर लिया। सेनापति स्वयं धनियों का धन अपने वश में कर रहा था। धनी के पीपे भी उसकी नज़र में आये।

"ये मोम के पीपे हैं, इसलिए ही मकान मालिक उनको छोड़कर गया है, मालूम करो कि उनको कोई खरीदना चाहता है कि नहीं।" सेनापति ने अपने सैनिकों से कहा। उन्होंने बहुत कोशिश की, पर उनको खरीदने कोई नहीं आया।

आखिर एक गरीब ने आकर कहा—"मैं मोम बत्ती बनाकर गुजारा करता हूँ। मुझे पीपे सस्ते में दिलवा दीजिये। शत्रु सैनिक ने जो कुछ पैसे उसने दिये उन्हें जेब में डाल लिये और कहा—"इन पर पहरा देते देते मेरी जान जा रही है.... जितनी जल्दी हो, इनको ले जाओ।"

धर्मेन्द्र

मोम बत्तीवाला उन तीनों चीज़ों को कुलियों द्वारा उठवाकर अपने घर ले गया।

शत्रु के चले जाने के बाद, जब मोम बत्तीवाले ने मोम बत्तियाँ बनानी चाहीं और पीपों को टटोला तो उसके हाथ में कोई कड़ी सी चीज़ आई। जब उन्हें ऊपर उठाकर देखा, तो वे सोने के सिक्के थे। उसने आश्चर्य से और टटोला तो मोम की तह के नीचे ढ़ेर से सोने के सिक्के थे।

गरीब ने जब और चीज़ों को ध्यान से देखा, तो उनमें उसने चान्दी और ताम्बे के सिक्के पाये। उसे बड़ा आश्चर्य और सन्तोष हुआ। पर उसने यह बात किसी को पता नहीं लगने दी। जिस कमरे में ये पीपे रखे हुए थे, उस पर उसने मज़बूत ताला लगवा दिया। उनकी हिफ़ाजत के लिए बाकी इन्तजाम भी करवाये। उसे यद्यपि गरीबी का कोई भय न था, तो भी उसने रईसी का कोई दिखावा नहीं किया और आराम से जिन्दगी बसर करने लगा।

समय बीतता गया, उसका खजाना भला कब खाली होता? एक बार उसने अपने

दोस्त दर्जी से कपड़े सिलवाये और उसे मुट्ठी भर सोने के सिक्के दिये।

दर्जी चकराया—"इतना पैसा क्यों? मैं नहीं लूँगा। मेरी मजूरी दे दो, बस, काफी है।" उसने कहा।

"मेरे पास पीपा भरके सोना है। मैं क्या करूँगा यह सारा? तुम भी कौन से धनी हो, इसे रखो।" मोम बत्तीवाले ने कहा।

दर्जी ने इस पर विश्वास नहीं किया। "तुम्हारे पास इतना सोना कहाँ से आया? क्या तुम पगलागये हो?" दर्जी ने पूछा।

"मेरे साथ आओ, स्वयं अपनी आँखें देख लेना।" मोमबत्तीवाला अपने दोस्त दर्जी को साथ ले गया। उसे पीपों में रखे सोने, चान्दी और ताम्बे के सिक्कों को दिखाकर कहा—"इस सब का मैं क्या करूँगा? इसमें से आधा तुमको दूँगा, तुम ले जाओ।"

दर्जी ने दो मुट्ठी भर सोना लिया। "यह मेरे लिए काफी है, मेरी सारी जिन्दगी आराम से कट जायेगी। मैं एक बात बताता हूँ, सुनो। यह धन, तुम हज़ार सालों में भी नहीं खर्च सकते। बस, देखकर तसल्ली कर लिया करो। यह बिल्कुल बेकार धन है, इसलिए छुपे छुपे इसे गरीबों में बाँट दो। कम से कम वे तो इसका फायदा उठायेंगे। पैसे का भी उपयोग हो जायेगा।"

मोमबत्ती बनानेवाले को यह सलाह जंची। उसने बहुत-से सोना चान्दी गरीबों में बाँट दिया और जो कुछ बच रहा उससे उसने आराम से जिन्दगी बसर की।

दुख फिर सुख

विश्वपुर रियासत में एक बार एक बड़ा ज्योतिषी आया। उसने कई की कुण्डलियाँ देखीं, उनका फल बताकर कई को चकित किया। यह देख बिश्वपुर के सेनापति ने अपने लड़के प्रेमदत्त की कुण्डली भी ज्योतिषी को देते हुए कहा—"यह मेरा इकलौता लड़का है। हमेशा कहीं यह खोया खोया-सा रहता है। कविता करता है, मुझे नहीं लगता कि यह वीरों की तरह जीकर मेरी प्रतिष्ठा बनाये रखेगा।"

ज्योतिषी ने प्रेमदत्त की कुण्डली देखकर कहा—"क्यों आप ऐसा कह रहे हैं? इस लड़के के भाग्य में राजयोग है। यह छुटपन में ही गद्दी पर आयेगा और जीवन भर राज्य करेगा।"

ज्योतिषी की बात सुनते ही राजा, प्रेमदत्त का परम शत्रु बन गया। उस ज्योतिषी ने सब की कुण्डलियाँ देखकर ठीक ठीक बताया था, फिर वह प्रेमदत्त के बारे में भला क्यों गलती करेगा? किसी न किसी दिन, वह उसकी गद्दी हथियाने की कोशिश करेगा। राजा ने कहा।

राजा का मुख देखते ही सेनापति जान गया कि उसके मन में क्या था। सेनापति में राजभक्ति बहुत थी। परन्तु उसे यह विश्वास न हुआ कि राजा उसके लड़के को जिसके भाग्य में राजयोग लिखा था, बिना मरवाये रहेगा। राजा की बात तो दूर, अगर उसके लड़के ने राजद्रोह शुरु किया, तो वह ही उसे मरवा देगा। इसलिए परिस्थिति के उलझने तक क्यों

इन्तज़ार की जाये। उसने अपने लड़के प्रेमदत्त से कहा—"तुम इतने दिन कविता में रमते रहे, मेरी प्रतिष्ठा के लिए कुछ भी न किया। अगर तुमने राज्य की बाग डोर सम्भाली, तो मुझे बड़ी खुशी होगी। पर यह खुशी मुझे नहीं मिलेगी। तुम्हें राजा छुपे छुपे मरवा देंगे, इसके लिए उनको बुरा भला कहना ठीक नहीं है। तुम आज रात को ही देश छोड़कर चले जाओ। तुम जिन्दा रहो, कहीं भी रहो.... यह मेरे लिए काफ़ी है।"

उसी दिन रात को प्रेमदत्त विश्वपुर राज्य छोड़कर चला गया। सेनापति ने अगले दिन राजा से कहा—"महाराज, आपके राज्य में, आपके और आपकी सन्तति के सिवाय किसी को राजयोग नहीं मिलना चाहिए। मैंने ज्योतिषी की बातें सुनकर अपने लड़के को देश निकाला दे दिया है।"

यह सुनकर राजा बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उसकी सारी चिन्ता जाती रही। राजा यह भी जान गया कि सेनापति में उसके लिए कितनी भक्ति थी।

अगर किसी को ज्योतिषी की बात पर विश्वास न था, तो वह केवल प्रेमदत्त ही था। उसे कविता के आनन्द लेने के सिवाय कोई इच्छा न थी। वह न राज्य चाहता था, न शासन ही। उस हालत में घर बार छोड़कर परदेश चले जाना, उसे बेमतलब लगा। उसे ऐसा लगता, जैसे दुनियाँ पागल हो गई हो।

उसे वक्त पर न खाना मिलता, न सोने के लिए जगह....धूप पानी में पड़ा रहता। वह बड़ी तकलीफ़ें उठा रहा था। उसे होते होते....संसार से, जीवन से विरक्ति हो गई। उस दुस्थिति में कविता कन्या ने भी उसका परित्याग कर दिया।

एक दिन वह कहीं किसी रास्ते जा रहा था कि वह बेहोश गिर गया। पास की झोंपड़ी में से एक लड़की और एक बुढ़िया आयी। उन्होंने उसकी सेवा शुश्रूषा की। उसे वे होश में लाये। उसे उठाकर वे अपनी झोंपड़ी में ले गये और उसे खाट पर लिटा लिया। थोड़ा भोजन पेट में जाने के बाद प्रेमदत्त को कुछ ढ़ाढ़स हुआ।

घर छोड़ने के इतने दिनों बाद, उसे साथ के लोगों से कुछ आदर मिला था। उसे मनुष्यों पर, जीवन पर फिर कुछ कुछ आसक्ति होने लगी।

उस झोंपड़े में रहनेवाली लड़की और बुढ़िया बहुत अच्छी दीख पड़ीं।

"आप कौन हैं, कहाँ के रहनेवाले हैं?" उस लड़की ने उससे पूछा।

"मेरा कोई नहीं है, मेरा नाम प्रेमदत्त है। जीवन में मेरा एक मात्र आनन्द अच्छी कविता लिखना और पढ़ना है।" उसने कहा।

"मैं भी उसी परिस्थिति में हूँ। सिवाय इस नानी के मेरा अपना कोई नहीं है। अगर आप कविता ही लिखना चाहते हों, तो हमारे साथ रहकर कविता की जा सकती है। जब आप हम से ऊब जायें, या हमारी झोंपड़ी से ऊब जायें, तब हमें छोड़कर चले जाना।"

"जब आप मुझे इतनी आदर की दृष्टि से देख रहे हैं, मैं क्यों आप से ऊबूँगा?" प्रेमदत्त ने कहा।

"मैं बदशक्ल हूँ....मुझे देख देखकर कोई भी ऊब सकता है।" उस लड़की ने कहा।

प्रेमदत्त ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा और कहा—"तुम्हें कौन बदशक्ल कहता है?" उसने तुरत उसके सौन्दर्य

पर एक कविता लिख दी। कविता को सुनकर लड़की खुश हुई।

दिन बीतते जाते थे। प्रेमदत्त उस "बदशक्ल" लड़की को बड़े स्नेह से देखता आया था। यह देख उस नानी ने एक दिन कहा—"बेटा, अब इस लड़की की शादी की उम्र हो गई है। बदशक्ल है, इसलिए इससे किसी ने शादी नहीं की। अगर बिना शादी किये ही यूँ शहर में रहती, तो हर कोई कुछ न कुछ कहते रहता। हम यह सब न सह सके। इसलिए हम नगर से बाहर आकर रहने लगे।

"वे मूर्ख हैं, जिन्होंने इस लड़की में असौन्दर्य देखा है। उसके हृदय में असाधारण सौन्दर्य है। मैं इससे प्रेम करता हूँ। मैं इससे शादी भी कर सकता हूँ। पर मुझ जैसे भिखारी से शादी करके तुम क्या सुख पाओगी? इतने दिनों से आप मेरी देखभाल कर रही हैं, पर मैं एक दिन भी आपकी परवरिश न कर पाया।" प्रेमदत्त ने कहा।

"तुम सुन्दर हो, और कहते हो कि तुम इस लड़की को चाहते हो, पर यह प्रेम कब तक रहेगा? यदि कल कोई अच्छी लड़की दिखाई दी, तो उससे प्रेम करने लगोगे?" नानी ने कहा।

"मैं जब कभी शादी करूँगा, तो इससे ही करूँगा। यह मैं शपथ करता हूँ।" प्रेमदत्त ने कहा।

"हम तुम्हारी गरीबी देखकर नहीं घबराते हैं। मैं तुरत तुम दोनों का विवाह करवा दूँगा।" नानी ने कहा।

अगले दिन मुहूर्त के समय, जब उस देश का राजा वहाँ आया, तो सारी बात खुल गई। उस झोंपड़ी में रहनेवाली लड़की उस देश की राजा की लड़की ही

थी। उसका नाम चन्द्रिका था, जब वह सयानी हुई, तो पिता ने उसका विवाह करना चाहा। वह चूँकि सुन्दर न थी, कोई उससे विवाह करने को तैयार न हुआ। आखिर राजा उससे शादी करनेवाले को आधा राज्य देने के लिए भी मान गया। पर चन्द्रिका उसके लिए नहीं मानी।

"जो सौन्दर्य देखकर मुग्ध होता है, वह प्रेम नहीं कर सकता। जो राज्य के लोभ में मुझ से विवाह करेगा, वह मुझ से प्रेम नहीं करेगा। जिस प्रेम को मैं चाहती हूँ, वह प्रेम मुझे उस राजमहल में नहीं मिलेगा। मुझे दूर किसी झोंपड़ी में रहने दीजिये। प्रेम मुझे खोजता आयेगा।" चन्द्रिका ने अपने पिता से कहा।

राजा को लड़की की बात जँची। उसने नगर के पास ही एक झोंपड़ी बनवाई। उसमें चन्द्रिका के जीवन के लिए आवश्यक व्यवस्था की और उस आया को वहाँ रखा, जो उसे बचपन से पालती आयी थी, कई सप्ताह और कई मास के बाद प्रेम ने, प्रेमदत्त के रूप में उस झोंपड़ी में पैर रखा।

यह सब सुनने के बाद प्रेमदत्त ने चन्द्रिका से अपनी असली बात कही। दोनों ने कष्टों के बाद सुख पाया। उनके कष्टों के कारण ही उनमें प्रेम उपजा था।

राजा अपनी लड़की और होनेवाले दामाद को जलूस में, नगर ले गया। उसने उनका विवाह करके, उसको आधा राज्य भी दे दिया।

कंस की मृत्यु के बारे में सुनते ही कंस की पत्नियाँ मानों शोक में जम-सी गईं। उसकी लाश पर पड़ी पड़ी वे जोर से रोने लगीं। उन्होंने कभी न सोचा था कि वह एक लड़के के हाथ यूँ बुरी तरह मरेगा और वे इतनी जल्दी विधवायें हो जायेंगी।

कंस की माँ भी अपनी बहुओं के साथ रोई धोई। उसने अपने पति उग्रसेन के पास जाकर कहा—"क्या तुमने अपने लड़के को देखा है? लगता है, उस पर जैसे बिजली गिर पड़ी हो। उसका दहन संस्कार करवाना है न? अपने बाहुबल से कृष्ण ने राज्य पा लिया है। कृष्ण से संस्कार के लिए अनुमति लो।"

उस समय कृष्ण को, जो यादवों के बीच खड़ा था, कंस की पत्नियों का रोना सुनाई दिया। उसकी आँखों में तरी आ गई। उसने अपने चारों ओर खड़े बन्धुवर्ग से कहा—"मैंने बचपन की नादानी में कितनी स्त्रियों को विधवा बना दिया है! पर सच कहा जाये, तो कंस की दुष्टता को खतम करने का और कोई उपाय था ही नहीं। इस तरह का दुष्ट कहीं मिलेगा, जिसने अपने पिता को कैद करके स्वयं राज्य हथियालिया हो? पापी

१२. बलराम कृष्ण का विद्याभ्यास

को देखकर दया करना भी शायद पाप है? मैंने इस दुष्ट को लोक कल्याण के लिए ही मारा है। आगे क्या करना है, यह भी मैंने तय कर लिया है।"

उग्रसेन, शिनि आदि यादव वृद्धों को साथ लेकर, कृष्ण के पास आया। गदगद स्वर में उसने कहा—"बेटा, तुमने अत्यन्त भयंकर शत्रु को मारकर बड़ी ख्याति पाई है। यादव वंश को तुमने बहुत आनन्द दिया है। आज से राज्य तुम्हारा है। तुम ही राजा हो। अब चूँकि तुम्हारा शत्रु मर गया है, तुम अपने मन में बदले की भावना न रखो। हम जैसे लोगों को आदर की दृष्टि से देखो। इस समय कंस का दहन-संस्कार करवाना है। यदि तुमने इसकी अनुमति दी, तो मैं, मेरी पत्नी और मेरी बहुयें भी अपना कर्तव्य पूरा कर लेंगे। इसके बाद मैं अरण्यवास के लिए चला जाऊँगा।"

कृष्ण ने कहा—"क्या इसके लिए मेरी अनुमति की आवश्यकता है? कंस के संस्कार के बारे में मैं क्या कोई आपत्ति करूँगा? पर एक बात कहनी है। मुझे राज्य से कोई वास्ता नहीं है। मैंने राज्य के धन के लालच में कंस को नहीं मारा है। वह क्यों कि वंश द्रोही था, अत्याचारी था, लोकहित के लिए मैंने उसे मार दिया है। इसके लिए जो कीर्ति मुझे मिलेगी वही काफी है। अब मैं और मेरे पिता, अपने पशुओं के बीच चले जायेंगे। गोपालकों के साथ रहेंगे और खेलेंगे, कूदेंगे। मेरा एक निवेदन है। तुम्हारे राज्य को, तुम्हारे नीच लड़के ने हर लिया था। आखिर वह तुम्हारा ही हो गया। तुम राज्याभिषेक करवा लो। यह राज्य मैं जीतकर तुम्हें सौंप रहा हूँ।

अगर तुमको मुझ पर प्यार है, तो तुम मेरी इच्छा नहीं ठुकराओगे।

कृष्ण ने समय व्यर्थ न किया। उग्रसेन का उसने तभी राज्याभिषेक भी कर दिया। उग्रसेन ने बलराम और कृष्ण का यथोचित सत्कार किया। मथुरा नगर को, उसने पहिले की अपेक्षा वैभवपूर्ण बनाया।

एक दिन उसने बलराम से कहा— "हम जब से पैदा हुए हैं, तब से बिना शिक्षा, विक्षा के जंगलों में फिर रहे हैं। कम से कम अब किसी गुरु के पास जाकर पढ़ लिख लेना अच्छा है।"

यह ख्याल उठते ही, बलराम कृष्ण ने अपना ख्याल अपने लोगों को बताया। उनकी अनुमति पर अवन्तिपुर के सान्दीप नाम के ब्राह्मण के पास गये। उससे उन्होंने शिक्षा देने की प्रार्थना की। उसने उनको अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कर लिया और चौसठ दिनों में उनको चारों वेद और षडंग बता दिये। उन्होंने बारह दिनों में धर्मशास्त्र, तर्क, न्यायशास्त्र, गणित, संगीत, सैनिक विद्यायें सीख लीं। पचास दिनों में अस्त्रशास्त्र का पूरी तरह अभ्यास किया।

सान्दीप को उनकी अध्ययन शक्ति देखकर अचरज हुआ।

बलराम कृष्ण ने गुरु के पास विद्याभ्यास पूर्ण करके उसको नमस्कार करके कहा— "हम आपकी दया से शिक्षित हो गये हैं, अब बताइये कि आप हम से क्या चाहते हैं। चाहे वह कितनी भी कठिन बात हो, हम अवश्य आपकी इच्छा पूरी करेंगे।"

यह सुनकर सान्दीप ने कहा—"मेरे एक लड़का था। जब वह तीर्थ यात्रा कर रहा था, तो समुद्र स्नान करते समय
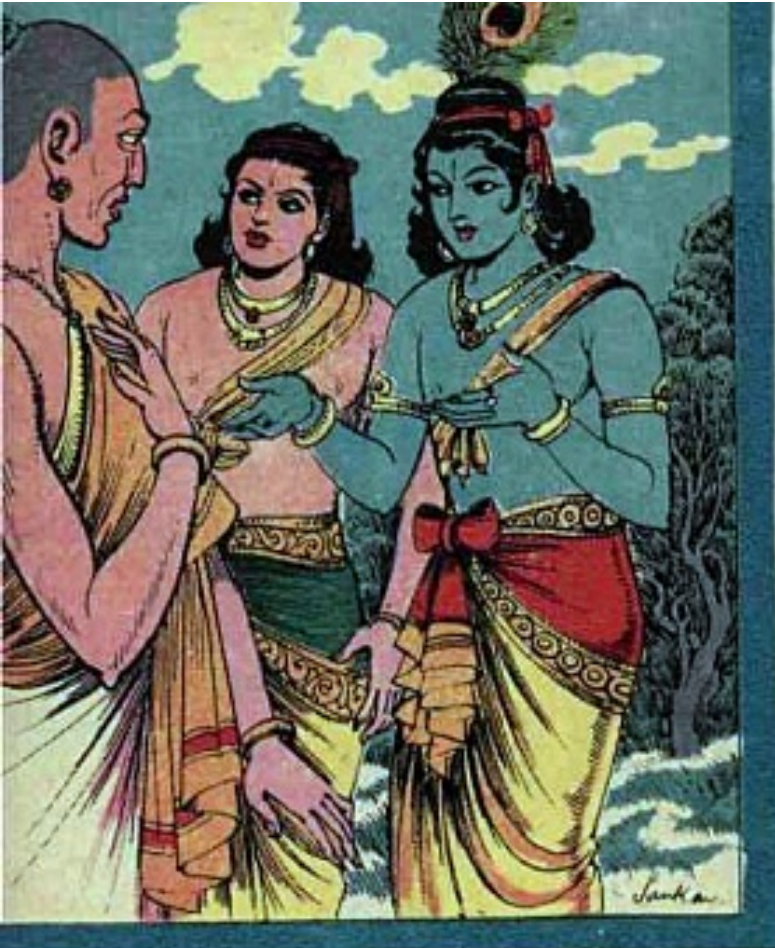
उसको एक तिमिंगल ने निगल लिया। उस पुत्र के शोक से मैं अभी तक दुखी हूँ। मेरे लड़के को, जैसे भी हो, मुझे दिला दो।"

गुरु दक्षिणा देने के लिए कृष्ण अपने बड़े भाई की अनुमति लेकर, धनुष बाण लेकर, समुद्र तट पर गया। उसने समुद्र से कहा—"हमारे गुरु सान्दीप का पुत्र तुम्हारे पास है। उसको जिसने निगला है, उसे तुरत दिखाओ।"

तुरत समुद्र प्रत्यक्ष हुआ और हाथ जोड़कर उसने कहा—"पंचजन नाम का राक्षस तिमिंगल के रूप में आया और वह तुम्हारे गुरु के लड़के को निगल गया। उस राक्षस को मैं अभी तुम्हारे पास लाता हूँ।"

तुरत समुद्र की तरंगों ने तिमिंगल के रूप में पंचजन को लाकर तट पर पटक दिया। कृष्ण ने जब तलवार से उसका पेट चीरा, तो उसमें गुरु पुत्र नहीं था। परन्तु एक बड़ा शंख था। उसको देखते ही कृष्ण बड़ा खुश हुआ और उसको अपने पास रख लिया। क्योंकि वह पंचजन के पेट से मिला था इसलिए उस शंख का नाम पांचजन्य रखा गया।

परन्तु गुरु पुत्र की समस्या हल नहीं हुई। उस लड़के का क्या हुआ? मरकर यमलोक पहुँचा होगा। यह सोचकर कृष्ण सीधे दक्षिण दिशा की ओर गया। यमलोक में पहुँचा। उसने सिंहासन पर बैठे यम राजा को देखकर कहा—"हमारे गुरु सान्दीप के लड़के तुम ले आये हो। उसे मुझे वापिस दे दो। अगर तुमने मुझे सीधी तरह न दिया, तो अच्छा न होगा।"

यम घबराकर काँपने लगा। उसने हाथ जोड़कर कहा—"मैं प्राणियों के पाप पुण्य निर्धारित करता हूँ। पर उनके
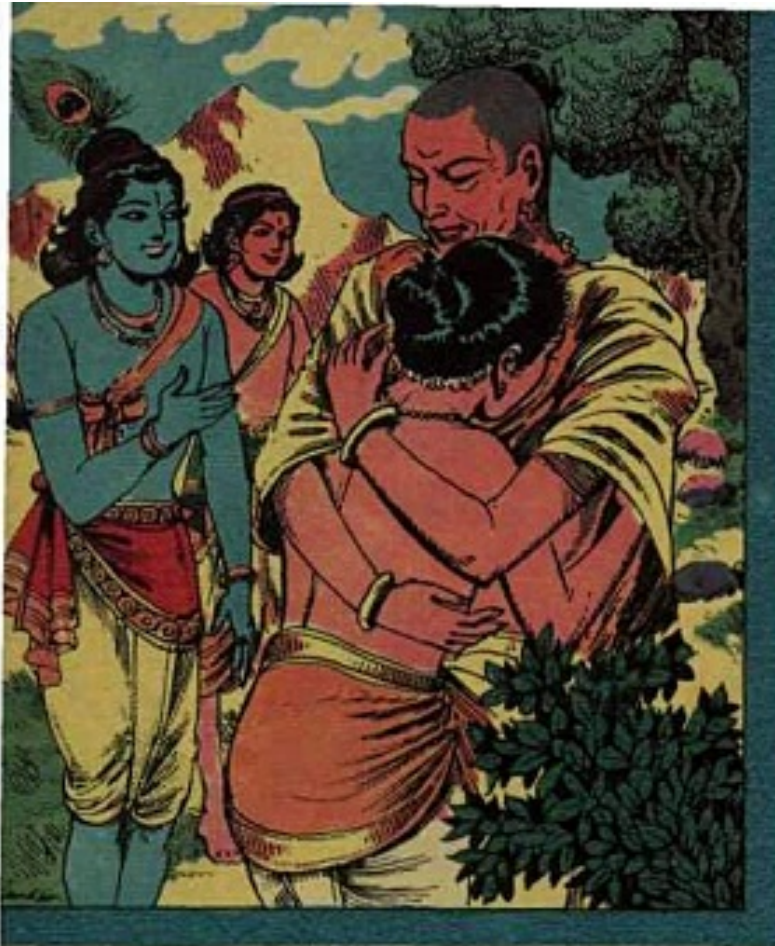
प्राण नहीं लेता हूँ। वह मृत्यु का काम है। तुम्हारे गुरुपुत्र को मृत्यु लाया है।"

"मृत्यु को इतना घमंड़! वह हमारे गुरु पुत्र को उठा ही नहीं लाया, बल्कि हमें इतनी दूर आने के लिए भी उसने मजबूर किया। उसकी आयु खतम समझो।" कृष्ण ने अपने धनुष पर एक दिव्य बाण चढ़ाया। यह देख मृत्यु डर गया और गुरु पुत्र के प्राणों को फिर शरीर में रखकर, कृष्ण के सामने आया।

इस तरह कृष्ण ने समुद्र, यम, मृत्यु तीनों भय से कंपित करके पांचजन्य और सजीव गुरु पुत्र को लेकर गुरु के पास वापिस आया। गुरु आश्चर्य, आनन्द में फूला न समाया। उसने अपने लैड़के का आलिंगन किया। इस अपूर्व गुरु दक्षिणा पाकर उसने कृष्ण को खूब आशीर्वाद दिया। बलराम और कृष्ण कुछ दिन और गुरु के पास रहे। फिर उससे विदा लेकर वे मथुरा नगर में पहुँचा।

उनका उग्रसेन ने खूब स्वागत किया। उनका जलूस निकालने की व्यवस्था की, बन्धु और मित्रों को लेकर उनसे मिलने गया और बाजे गाजों के साथ उनको लिवा लाया। बलराम कृष्ण वसुदेव के घर गये। उन्होंने अपने विद्याभ्यास के बारे में सबको बताया। वे सुख से अपना समय बिताने लगे।

जरासन्ध मगध देश का राजा था। इसकी लड़कियाँ आस्ति, प्रास्ति कंस की पत्नियाँ थीं। वह यह सुनकर कि कृष्ण ने उसके दामाद को मारकर, उसकी लड़कियों को विधवा बना दिया था आग बबूला हो उठा। यह जानकर कि कृष्ण बड़ा पराक्रमी भी था, इस ईर्ष्या में उसने कई राजाओं को अपनी ओर मिला

लिया। वह इक्कीस अक्षौहिणी सेना लेकर मथुरा पर आक्रमण करने के लिए आया। वह यमुना के तट पर रुका और विन्द अनुविन्द नाम के दो राजकुमारों को अपना दूत बनाकर उसने कृष्ण के पास भेजा। वे उग्रसेन की सभा में पहुँचे। उसी सभा में बलराम और कृष्ण भी बैठे थे, उन दोनों को सम्बोधित करके उन्होंने जरासन्ध का सन्देश इस प्रकार दिया।

"तुमने और तुम्हारे भाई ने कंस और उसके भाई को मार दिया। कंस मेरा दामाद था। मैं चूँकि अपनी लड़कियों का दुख देख नहीं पाता हूँ, इसलिए ही तुमसे युद्ध करने आया हूँ। तुम जल्दी ही युद्ध के लिए आओ। या तो तुम जीवित रहो, नहीं तो मैं। हम दोनों के लिए भूमि पर जगह नहीं है। यदि तुमने मुझ से मुखामुखी युद्ध किया, तो मैं तुम्हें मार दूँगा और अगर युद्ध न करके भाग निकले, तो पाताल में भी तुम्हारा पीछा करके मैं मार दूँगा। मैं कैसा हूँ, अगर तुम अक्रूर से या अपने भाई सात्यिकी से पूछोगे, तो मालूम हो जागेगा। कल ही मैं मथुरा नगर का घेरा डालूँगा। इसलिए तुम तैयार रहो।"

दूतों द्वारा पहुँचाये गये, जरासन्ध के सन्देश को सुनकर, कृष्ण ने हँसते हुए कहा—"बहुत खुशी है। मैं कभी इतनी बातें नहीं कर सकता। मैं जरासन्ध का घमंड चूर करना ही चाहता था कि वह ही स्वयं आ गया। आने दो। राक्षसों द्वारा जोड़े गये उसके शरीर को मैं फिर चीर दूँगा। जैसे कंस को मारकर मैंने यह राज्य उग्रसेन को दे दिया है, उसी तरह जरासन्ध

को मारकर उसके लड़के को मगध का राजा बनाऊँगा।"

जरासन्ध द्वारा भेजे गये राजकुमारों का कृष्ण ने सत्कार किया और उसके उत्तर को उन्होंने जरासन्ध तक पहुँचा दिया।

जरासन्ध का नाम सुनते ही, उग्रसेन आदि यादव घबरा गये। उनमें विकद्रु ने जो वृद्ध था, सबके सामने ही कृष्ण से कहा।

"बेटा, जिस प्रकार कमल से ब्रह्मा पैदा हुआ था, उसी प्रकार तुम यदु वंश में पैदा हुए हो। जब तक तुम हो, यादव वंश को कोई भय नहीं है। जरासन्ध को असंख्य राजाओं का समर्थन प्राप्त है। वह तेज है। क्रूर स्वभाव का है। तुम अकेले ही उसको युद्ध में हरा सकते हो, कंस को अपने बल पर इतना अभिमान था कि उसने किले की किसी प्रकार रक्षा नहीं की। न हथियार है। न रसद ही है। सच कहा जाये, तो यह किला किला ही नहीं है और अचानक शत्रु ने हमला बोल दिया है। यदि हमने उसका मुकाबला न किया और हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे तो हम अपना राज्य खो बैठेंगे। पहिले मुचिकुन्द, पद्मवन्त, सारस, हरित आदि यादव राजाओं ने ऋक्षवन्त, विन्ध्य और सह्य नामक पर्वतों में प्रक्षिम समुद्र के द्वीपों में कई अजेय दुर्ग बनाये थे। इन चारों से पहिले माधव ने मथुरा का शासन किया था। अब इसकी रक्षा करना सम्भव नहीं है। एक और दुर्ग की व्यवस्था कर लेना अच्छा है। मैंने संकेत मात्र किया है, जो तुम उचित समझो, वह करो।"

अरण्य पुराण

[१५]

गाँव के बाहर, पेड़ के नीचे बैठे लोगों का कोलाहल जब खतम हुआ तो वे लाठी, बाँस, हँसिये, चाकू पकड़कर स्त्रियाँ और पुरुष बलदेव और पुजारियों के साथ गली में चले आये।

लोग किवाड़ खटखटाने लगे। मशालों की रोशनी झोंपड़ी में आने लगी। खाट पर बघेल पंजा सिकोड़े लेटा हुआ था। तुरत खामोशी छा गई। आगेवालों ने डर के मारे पीछेवालों को धकेलकर भाग जाने की कोशिश की। उस समय बघेल ने सिर ऊँचा करके, मुख खोलकर, आराम से अंगड़ाई ली।

यकायक सारी गली खाली हो गई। बघेल खिड़की से बाहर आ गया और मौवली के पास खड़ा हो गया।

"अब सवेरे से पहिले वे घरों से नहीं निकलेंगे। अब क्या किया जाय?" बघेल ने कहा।

"अच्छा काम किया, सवेरे तक उनको एक नज़र से देखते रहना। मुझे जरा सोना है।" कहकर मौवली जंगल में भाग गया और एक पत्थर पर आराम से सो गया। जब वह उठा, तो उसकी बगल में बघेल था।

"वे पति पत्नी खान्हीवारा के पास मजे में पहुँच गये। भेड़िया माँ ने यह खबर भिजवाई है, आधी रात से पहिले ही उनको एक घोड़ा मिल गया था। उनका सफर मजे में कट गया। आज सवेरे बहुत देर तक कोई भी यहाँ अपने घर से न निकला।" बघेल ने कहा।

अन्तिम पृष्ठ

मौवली कुछ सोचने लगा। पेड़ के नीचे बैठे बलदेव की सुनाई हुई एक कहानी उसे याद हो आयी। उसने सिर ऊँचा करके बघेल से कहा—"हाथी और उसके तीनों लड़कों को एक बार बुला लाओगे?"

बघेल ने अचरज में कहा—"वह जंगल का मालिक है। हमारे लिए उसके पास "आ" "जा" कहना उचित है क्या?"

"एक बात, ज़रा कान में फूँक देना, वह जरूर आ जायेगा। वह बात यह है, "भरतपुर के खेतों पर हमला।" मौवली ने कहा।"

बघेल, हाथी और और उसके लड़कों को ढूँढ़ता गया। यदि कहा गया कि मौवली ने बुलाया है, तो उसे गुस्सा आये, तो क्या?

मौवली का खून उबल रहा था, उसने कभी मनुष्य के खून की गन्ध न सूँघी थी, वह मेस्सुवा का खून सूँघकर घबरा गया। अगर उसमें कहीं प्रेम था, तो वह मेस्सुवा के प्रति ही था। उसे चूँकि आदमियों ने बाँध दिया था, इसलिए उसने उनसे बदला लेने की सोची। इसके लिए हाथी की मदद ज़रूरी थी। बलदेव की एक कहानी के कारण ही, वह यह सोच पाया था।

बिना कुछ कहे कहाये हाथी और उसके तीनों लड़के, बघेल के साथ मौवली के पास चले आये। मौवली ने बहुत देर तक कुछ न कहा, फिर बघेल की ओर मुड़कर उसने कहा—"मैं तुम्हें एक हाथी की कहानी सुनाता हूँ। बहुत समय पहिले भरतपुर के शिकारियों ने एक घंटे के घेरे के बाद एक हाथी को पकड़

लिया। गढ़े में उसके पैर पर कुछ लगा और सफेद निशान लग गया। फिर शिकारियों ने उसे गढ़े में से निकालने की कोशिश की। पर वह हाथी बड़ा पराक्रमी था, वह रस्सियाँ तोड़कर भाग गया, उसके तीन लड़के थे, ऐसा मुझे याद है।"

चान्दनी में जब हाथी इधर उधर चला, तो उसके पैर में सफेद लकीर दिखाई दी। मौवली ने हाथी की ओर मुड़कर पूछा—"जब फसल खालिहान में थी, तो क्या हुआ था?"

"मैंने और मेरे तीनों लड़कों ने उसे रौंदा और पीसा!" हाथी ने कहा।

"फिर खेतों का क्या हुआ?"

"कुछ भी नहीं हुआ।"

"और जो उन खेतों में खेती करके जीवन निर्वाह करते थे, उनका क्या हुआ?"

"खेत छोड़कर वे भाग गये।"

"उनके घर?"

"उनकी छतें हमने उखाड़ फेंकीं। मिट्टी के दीवारों को जंगल निगल गया। पाँच गाँवों को हमने जंगलों में मिला दिया। भरतपुर के खेतों पर यह हमला, मैंने और मेरे लड़कों ने किया था। पर

तुम तो आदमी हो, तुम्हें यह कहानी कैसे मालूम हुई?" हाथी ने पूछा।

"एक आदमी के मुँह मैंने सुना था, वह हमला खूब अच्छी तरह हुआ था। फिर उस तरह का हमला अब फिर होना चाहिये। तुम जानते ही हो, वह गाँव जहाँ से मुझे बाहर भेज दिया गया था, उस गाँव को जंगल में मिलाना है।" मौवली ने कहा।

"उसके लिए ढ़ेर-सा गुस्सा चाहिये। मुझे उन आदमियों पर गुस्सा नहीं है। क्या किया जाय?" हाथी ने कुछ सन्देह करते हुए पूछा।

"जंगल में शाकाहारी तुम ही हो क्या ? जब तक खेत खतम नहीं हो जाते, तब तक तुम पास न आना। तुम हरिणों बारहसींगों, सूअरों को इस तरफ भेजो।" मौवली ने कहा।

हाथी के अपने लड़कों के साथ चले जाने के बाद बघेल ने भय से काँपते हुए कहा—"वनप्रभू, जरूरत पड़े तो मेरा और भालू का भी ख्याल रखना। तेरे सामने तो हम बच्चे हैं।"

न मालूम यह अफवाह कैसे उड़ी, पर उड़ गई कि फलानी घाटी में अच्छी घास और पानी वगैरह था। इस तरह की अफवाह फाल्तू नहीं जाती। जंगल के हरिण वगैरह धीमे धीमे एक दिशा की ओर चरते चले गये। उनको ठीक मार्ग पर जाने के लिए प्रोत्साहित करनेवाले कितने ही जानवर थे। सब कुछ इस प्रकार हो रहा था, जैसे उसके पीछे कोई योजना हो। गाँव के पास असंख्य पशु चरने के लिए आये।

एक दिन सवेरे जब गाँववाले उठे, तो उन्होंने देखा कि उनके खेत नहीं थे। उनके पशुओं के लिए चारा नहीं था। उस दिन रात को कुछ क्रूर जन्तु गाँव में आये और वहाँ खड़े चार टट्टुओं को मारकर चले गये। फिर हाथी आये? उन्होंने घरों की छतें उखाड़ फेंकीं। मिट्टी की दीवारें तोड़ दीं।

तब तक गाँववालों ने जाने को तैयार कर ली। इतने में बारिश आ गई। गाँव खाली हो गया। इस प्रकार उस गाँव में वन के घुसने की भी तैयारी हो गई।

६९. मिह्रिमा मस्ज़िद

यह इस्ताम्बूल (तुर्की) के सब से अधिक ऊँचे पहाड़ पर यह सुन्दर मस्ज़िद है। इसमें बहुत-से रोशनदान हैं। इसको बनानेवाला सिनान नाम का एक आर्मोनियन शिल्पी था। मिह्रिमा, सोलियन की लड़की थी। उसकी चाह थी कि जब वह इस मस्ज़िद में हो तो ऐसा अनुभव करे जैसे वह आकाश के नीचे है।

Photo by Anant Desai
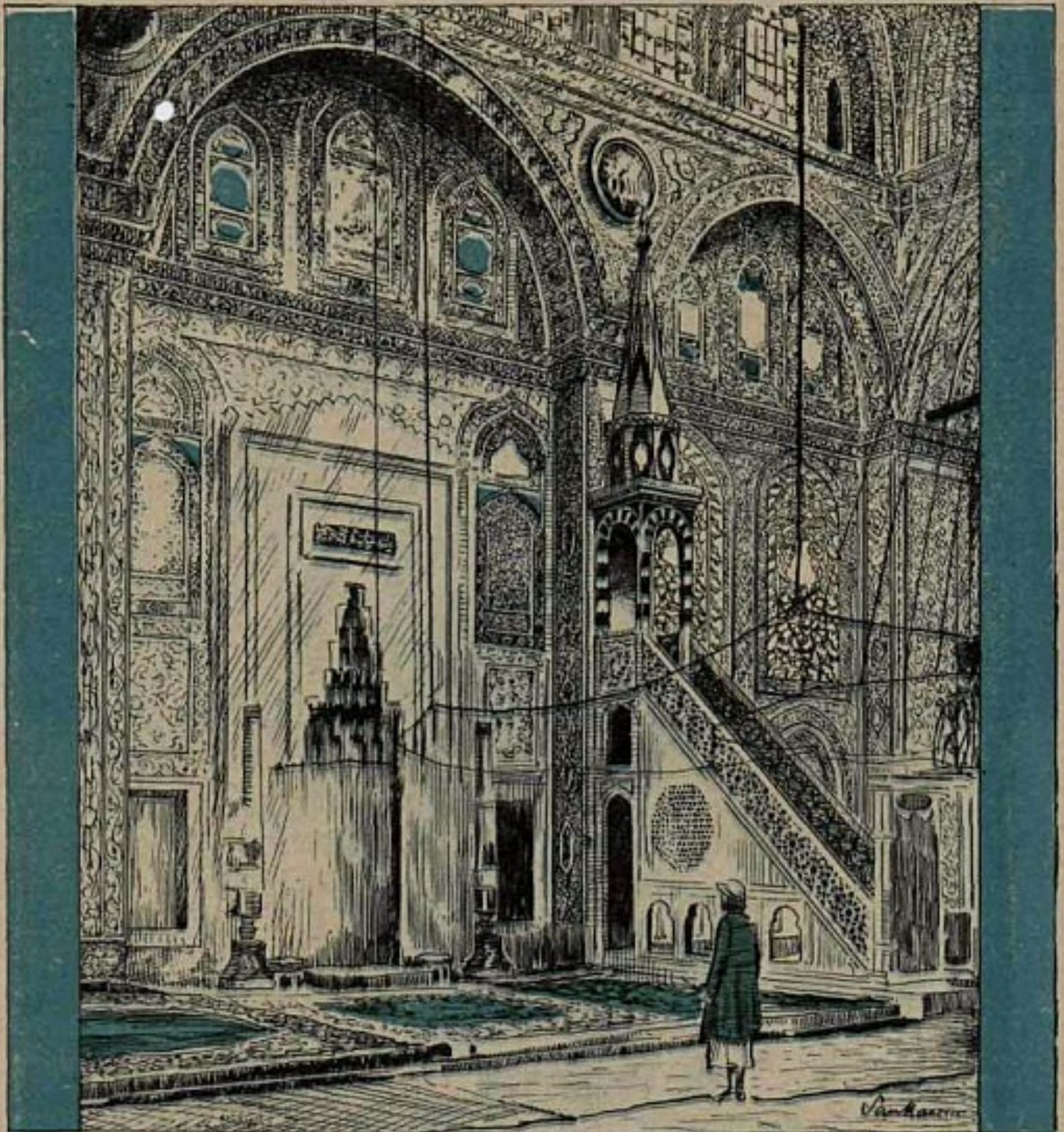
पुरस्कृत परिचयोक्ति

हम दो हैं सब के प्यारे!

प्रेषिका : श्रीमती कमला रमन-वाराणसी

Photo by P. R. Shinde
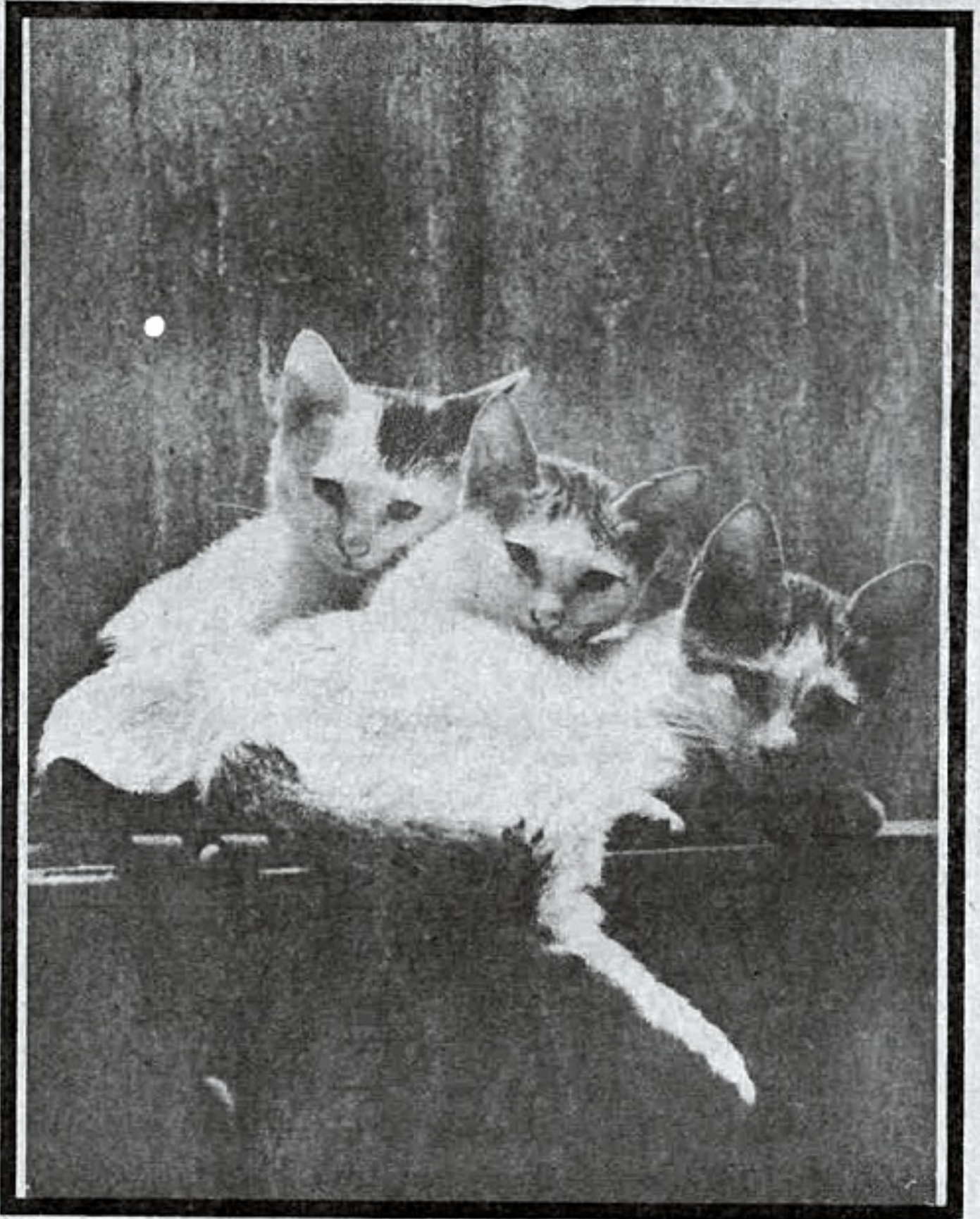
पुरस्कृत परिचयोक्ति

परिवार-नियोजन से बन गये न्यारे!!

प्रेषिका : श्रीमती कमला रमन-वाराणसी

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

नवम्बर १९६७ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ सितम्बर १९६७ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

सितम्बर – प्रतियोगिता – फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषिका को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **हम दो हैं सब के प्यारे!**

दूसरा फ़ोटो: **परिवार-नियोजन से बन गये न्यारे!!**

प्रेषिका: **श्रीमती कमला रमन,**
५/२९७ अवधगर्मी, वाराणसी

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'